महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६१ **अंक** : ०७

दयानन्दाब्द: १९४

विक्रम संवत्: चैत्र कृष्ण २०७५

कलि संवत्: ५११९

सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

एक वर्ष-३०० रु.
पाँच वर्ष-१२०० रु.
आजीवन -३००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

अप्रैल प्रथम २०१९

अनुक्रम

०१. आर्यों के आदिदेश और विश्व में...	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-२६	डॉ. धर्मवीर	०८
०३. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०४. 'सत्यार्थ प्रकाश' में 'सदाचार'....	डॉ. निर्मल कौशिक	१५
०५. अमर हुतात्मा महाशय राजपाल	कन्हैयालाल आर्य	१८
०६. पूर्ण प्रभु की पूर्ण कृति	प्रकाश चौधरी	२३
०७. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२६
०८. शङ्का समाधान- ४५	डॉ. वेदपाल	२८
०८. वेदों की दार्शनिक विचारधारा	जगदीशचन्द्र शास्त्री	३०
०९. आर्यजगत् के समाचार		४१

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

आर्यों के आदिदेश और विश्व में उनका प्रसार

('परोपकारी' के जनवरी द्वितीय अंक २०१९ में सम्पादकीय लेख-'**बदली जा रही है भारतवर्ष नाम की व्याख्या**' में मैंने पारसी मत के धर्मग्रन्थ '**अवेस्ता**' में वर्णित आर्यों के आदि निवास और प्रसार की जानकारी देने वाले सोलह शुभ आर्यदेशों की चर्चा की थी। अपने गौरवशाली आद्य इतिहास का संकेत पाकर आर्यजनों को गर्व की अनुभूति हुई। साथ ही उन्होंने यह चिन्तन भी किया-'**हम कौन थे, क्या हो गये हैं, और क्या होंगे अभी।**' प्रबुद्ध पाठकों ने उन देशों का नाम और स्थिति जानने की इच्छा प्रकट की। इस लेख में प्राचीन इतिहास और वर्तमान तटस्थ इतिहासकारों एवं भूगोलवेत्ताओं के अनुसार उनकी संक्षिप्त जानकारी उपलब्ध कराई जा रही है। साथ ही आर्यों के अन्य समुदायों के प्रसार का भी संक्षिप्त वर्णन है।)

विश्व के सभी सामाजिक समुदायों, यथा-वैदिक, पौराणिक, देव, असुर, पितर, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, पिशाच, पारसी, यहूदी, ईसाई, मुसलमान, जैन, बौद्ध, शैव, शाक्त, वैष्णव, सिख आदि का ज्ञात इतिहास प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से ब्रह्मा, अपर नाम स्वयंभू, आदम (संस्कृत रूप 'आदिम') से अपना आरम्भ मानता है। दूसरे शब्दों में कहें तो, इन सभी के 'धर्मग्रन्थ' ब्रह्मा/आदम को अपना आदिपुरुष और उसके पुत्र स्वायम्भुव '**मनुः**' (बाइबिल और कुरान में '**नूह**') को आदिराजा या पैगम्बर मानते हैं। अब प्रायः सभी साहित्येतिहासकार इस तथ्य से सहमत हैं कि '**ऋग्वेद संसार के पुस्तकालय का प्राचीनतम ग्रन्थ है**' इसी कारण संयुक्त राष्ट्र के कार्यालय/पुस्तकालय में **ऋग्वेद** को विश्व धरोहर मानकर सुरक्षित रखा गया है। जब यह तथ्य स्थापित हो जाता है तो यह भी स्थापित हो जाता है कि वैदिक समाज, वैदिक विचारधारा, वैदिक व्यवस्था, वैदिक संस्कृति-सभ्यता और भाषा भी प्राचीनतम हैं। स्पष्ट है कि अन्य समुदायों, सम्प्रदायों, विचारधाराओं का उद्भव कालान्तर में हुआ। उपर्युक्त तथ्यों की प्रामाणिकता में हमें प्राचीन संस्कृत साहित्य, ईरानी साहित्य, यूरोपियन साहित्य के उल्लेख मिलते हैं। एकबिन्दु-साधक बहुपक्षीय प्रमाण निराधार और असत्य नहीं होते। इनमें अगर आधुनिक भूगोल-वेत्ताओं के मन्तव्य भी जोड़ दिये जायें तो उनसे उपर्युक्त साहित्यिक परम्पराओं की पुष्टि ही होती है।

कुछ आधुनिक भूगोल-वेत्ताओं का कथन है कि अतिप्राचीन काल में हिमालय चारों ओर समुद्र से घिरा था और हिमालय भी इतना ऊँचा नहीं था। धीरे-धीरे वह ऊपर उठता गया, जो आज भी उठ रहा है। पृथ्वी का भाग प्रकट हुआ। मनुष्य तथा मनुष्येतर प्राणियों के योग्य प्राकृतिक साधन उत्पन्न हुए। यह कथन भारतीय साहित्य के उस कथन की पुष्टि करता है कि प्रथम मानव सृष्टि हिमालय क्षेत्र में हुई, क्योंकि वहीं प्राणियों के निवास योग्य प्राकृतिक वातावरण सर्वप्रथम निर्मित हुआ। हिमालय क्षेत्र में विद्यमान कैस्पियन सागर, क्षीरसागर, अराल सागर उसी समुद्र के अवशेष माने जाते हैं। हिमालय पर समुद्री जीवों के अवशेष भी मिलते हैं।

अतः सम्पूर्ण भारतीय, ईरानी और यूरोपीय साहित्य परम्परा हिमालय के **सुमेरु** या **मेरु** पर्वत क्षेत्र को मानव सृष्टि का आदि केन्द्र मानती है। ईरानी परम्परा में उसको '**पामीर**' कहा गया है। 'पामीर' नाम संस्कृत के 'पाद-मेरु' या 'मेरु-पाद' का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ है-'सुमेरु अर्थात् पामीर का पठार क्षेत्र।' इस क्षेत्र का आदि नाम देवलोक, स्वर्गलोक, दिव, नाक, त्रिदिव, त्रिविष्टप आदि था। यहाँ कथित भारतीय आर्य, ईरानी आर्य और यूरोपीय आर्य अविभक्त रूप से साथ रहते थे। उनकी एक भाषा, एक संस्कृति, एक व्यवस्था थी, जिसे '**वैदिक**' अथवा '**आर्य**' नाम प्राप्त है। इस ऐतिहासिक तथ्य को बाइबिल एवं मैक्समूलर, अर्नेस्ट हर्जफेल्ड आदि यूरोपीय विद्वानों ने भी स्वीकार किया है। यह स्थिति तब तक रही जब तक कि वहाँ देव-असुर वंशों के आर्यों का पारस्परिक कलह आरम्भ नहीं हुआ। देव-असुर संग्रामों के परिणामस्वरूप आर्य समुदायों के अनेक लोगों ने हिमालय क्षेत्र के चारों दिशाओं के मैदानी क्षेत्रों की ओर प्रव्रजन किया। जनसंख्या वृद्धि भी इसका कारण रही। कुछ आधुनिक इतिहासकारों के दो निष्कर्ष प्रामाणिक और इतिहाससम्मत नहीं हैं-**एक**-भारत में आर्यलोग मध्य एशिया से आये। **दो**-उन्होंने यहां के मूलनिवासियों को पराजित कर यहाँ की भूमि पर अधिकार किया। जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है कि आर्यों का

प्रव्रजन चारों दिशाओं में हुआ है और जब हिमालय समुद्र से घिरा था तो यहाँ प्रारम्भिक बस्तियाँ कहाँ से बस गईं? तथ्य यह है कि जम्बूद्वीप एकात्मक रूप से एक क्षेत्र था जहाँ आर्यों का शासन था और जो वैदिक संस्कृति अथवा प्राचीन भारतीय संस्कृति-सभ्यता का केन्द्र था। यह सारा क्षेत्र सांस्कृतिक रूप से एक था। उस सारे क्षेत्र में आर्यों का विचरण, आवागमन, निवास था, अतः किसी स्थान विशेष से आने-जाने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। ब्राह्मण ग्रन्थों में उल्लेख है कि पहले काश्मीर के समान हिमालय पार '**उत्तर कुरु**' वैदिक संस्कृति और शिक्षा का सर्वोत्कृष्ट केन्द्र माना जाता था। इसी प्रकार '**उत्तर मद्र**' भी आर्य शासन का केन्द्र था। (''**उत्तरस्यां दिशि ये के च परेण हिमवन्तं जनपदाः उत्तरकुरवः उत्तरमद्राः इति वैराज्याय ते अभिषिच्यन्ते, 'विराज्'-इति अनेन अभिषिक्तानाचक्षते,**'' ऐतरेय ब्राह्मण ३८.३)। वहाँ के राजाओं को राज्याभिषेक के बाद 'विराज्' पद मिलता था।

महाभारतकार कहता है कि सृष्टि के आरम्भिक काल में आत्मानुशासन से ही समाज परस्पर व्यवहार करता था। न दण्ड देने वाला था न दण्ड पाने वाला, न राज्य था न राजा (शान्तिपर्व ५९.१४)। ब्रह्मा ने अपने पुत्र मनु स्वायम्भुव को क्षत्रिय बनाकर पृथ्वी का पहला राजा नियुक्त किया। मनु ने सात द्वीपों वाली पृथ्वी पर शासन किया। वे द्वीप थे- जम्बू, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौंच, शाक और पुष्कर द्वीप। अपने बाद मनु ने इन्हीं द्वीपों का शासक अपने बड़े पुत्र प्रियव्रत को नियुक्त किया। आर्यों का तो आदि काल से ही इन देशों में शासन था, अतः किसी समुदाय को हराने-भगाने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। यह शासनक्रम देव-असुर संग्राम तक चलता रहा। देव-असुर वंशों के पश्चात् ही आर्यों में राजनीतिक विवाद प्रारम्भ हुआ जो प्रायः पारस्परिक ही थे। मूलनिवासियों अथवा द्रविड़ आदि समुदायों से युद्ध का उल्लेख आर्य-साहित्य में कहीं नहीं मिलता। यदि ऐसा होता तो आर्य-साहित्य में गर्व से विजय का वर्णन मिलता, जैसा कि प्रत्येक युद्ध में स्वाभाविक रूप से देखा जाता है। ऐसे कथन कुछ लेखकों की सुनियोजित कपोल कल्पनाएँ मात्र हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषदों, रामायण, महाभारत, पुराण आदि ऐतिहासिक ग्रन्थों में आर्यों के इतस्ततः प्रव्रजन के कारण और वर्णन इस प्रकार मिलते हैं। प्रजापति कश्यप की बड़ी पत्नी दिति से उत्पन्न पुत्र मातृनाम के आधार पर '**दैत्य**' कहलाये, अदिति से उत्पन्न '**आदित्य**' और दनु से उत्पन्न '**दानव**' कहलाये। ये सभी देव थे। ज्येष्ठ होने के कारण देवलोक का पहला राज्याधिकार दैत्यों को प्राप्त हुआ। जब आदित्य देव समर्थ और शक्तिशाली हुए तो उन्होंने पैतृक राज्य में अपना भाग माँगा। दैत्यों ने उनकी माँग अस्वीकार कर दी, जिससे पारस्परिक संघर्ष उत्पन्न हो गया (''**देवाश्च वा असुराश्च प्रजापतेः द्वयाः पुत्राः आसन्**'' तांड्य ब्राह्मण १८.१.२, ''**कनीयसा एव देवाः ज्यायसा असुराः**'' शतपथ ब्राह्मण १४.४.१.१, ''**असुराणां वै इयं पृथिवी-आसीत्। देवाः अब्रुवन् दत्ता नः स्या इति**'' काठक संहिता ३१.८)

यह संघर्ष युद्धों में परिवर्तित हो गया। छोटे भाई दानव भी दैत्यों के पक्ष में साथ मिल गये। शक्तिशाली, श्रेष्ठ, ज्येष्ठ, रक्षक होने के कारण दैत्य अपने लिए '**असुर**' विशेषण का प्रयोग गर्व से करते थे। देवों के अधिकार हनन करने के बाद उनके प्रति देवलोक की प्रजा की धारणा घृणा में बदल गई और 'असुर' हीनार्थ में प्रयुक्त होने लगा। स्वार्थी, अन्यायी, अधिकार-वंचक इसके अर्थ हो गये। 'देव' प्रयोग केवल आदित्यों के लिए प्रचलित रह गया। युद्धों में विस्तार होने के बाद देवों के पक्ष में पितर और मनुष्य (=मनु के वंशज) जुड़ गये, असुरों के पक्ष में राक्षस और पिशाच भी जुड़ गये। ये युद्ध व्यापक स्तर पर और अनेक वर्षों तक लड़े गये (महाभारत, शान्तिपर्व अध्याय ३२)। अन्ततः देवों की विजय हुई और असुरों को देवलोक से बाहर धकेल दिया गया। देवलोक से प्रव्रजन करके इन्होंने नई बस्तियाँ बसाईं। ये जन अपने आराध्य पैगम्बर को 'असुर महान्' (अहुरमज्द) पुकारते थे तथा विवस्वान् का पुत्र और मनु का भाई यम (विह्ववन्त यिम) इनका शासक था। इनका धर्मग्रन्थ 'अवेस्ता' नामक है, जिसके कुछ भाग में ऋग्वेद की ऋचाओं का पारसीकरण किया गया मिलता है। ये 'भारत-ईरानी आर्य' कहलाते हैं। '**जेंदावेस्ता**' के 'वेंदीदाद फरगर्द' प्रथम में सोलह उन शुभ देशों का वर्णन मिलता है, देवलोक से प्रव्रजन करके जो इन्होंने बसाये थे। अहुरमज्द (असुर महान्) ने इन देशों को बसाया था। सिकन्दर के आक्रमण के बाद यूनानी उच्चारण के कारण अवेस्ता में वर्णित इन नामों के उच्चारण में कुछ अन्तर मिलता है। इनके संस्कृत नाम भिन्न हैं। उन देशों के वर्तमान में

प्रचलित नाम और अवस्थिति इस प्रकार है। ये केवल वही देश हैं जो सुमेरु से प्रव्रजन के बाद प्रमुखत: उन आर्यों द्वारा बसाये गये थे जो असुर समुदाय के देव जन थे-

१. ऐर्यान वस्जो- संस्कृत रूप-आर्याणां बीज:। यह ईरान नाम का मूल है और ईरान की ओर प्रव्रजन करने वाले देवों (आर्यों) का आदि स्थान है। एक मत के अनुसार, सुमेरु (हिमालय) से प्रव्रजन करने के बाद उन्होंने अपना पहला जो देश बसाया था वह सर दरिया (भद्रसोमा) और आमु दरिया (वंक्षु) के मध्य क्षेत्रों में था। बाद में उसका विस्तार करते गये। वर्तमान ईरान उसी का विस्तारित क्षेत्र है।

दूसरा मत है कि कैस्पियन सागर (कश्यपाणां सागर:) को पार करके इन्होंने अपना पहला देश बसाया जिसका उच्चारण भेद से आज भी '**अजरबैजान**' देश-नाम सुरक्षित है। उसी से विकसित नाम 'ईरान' हुआ।

२. सुग्ध- संस्कृत नाम- रमणक और रोचक। यूनानी-सोग्डियाना। यह पूर्व सोवियत संघ के उजबेकिस्तान प्रान्त का प्रसिद्ध ऐतिहासिक नगर समरकन्द है। यह प्रान्त आज स्वतन्त्र देश है।

३. मोउरु- संस्कृत नाम- मृग/मर्व। यूनानी-मारगियाना। पूर्व सोवियत संघ के तुर्कमीनिस्तान प्रदेश में स्थित मर्व नगर। यह प्रदेश कैस्पियन सागर (कश्यपानां सागर:) के तट से सटा हुआ है। अब यह प्रदेश स्वतन्त्र देश है।

४. बग्धि/बख्त्रि- संस्कृत नाम-केतुमाल, वाह्लीक। ईरानी नाम-बल्ख। यूनानी- बैक्ट्रिया। आक्सस (वंक्षु, आमू) नदी के दायीं ओर स्थित ईरान का प्रसिद्ध और प्राचीन नगर और प्रदेश। राजनीतिक दृष्टि से यह प्रदेश अफगानिस्तान, पूर्व सोवियत संघ के ताजिकिस्तान और पाकिस्तान में बँटा हुआ है।

५. निसय- अनिश्चित स्थिति। अनुमानत: मर्व और बैक्ट्रिया के साथ लगता कोई प्राचीन क्षेत्र।

६. हरोयु- संस्कृत/भारतीय नाम-सरयू घाटी। यूनानी-एरियाना। अफगानिस्तान का प्रसिद्ध प्रान्त और नगर हेरात। यह प्रदेश मौर्य-शासन में सम्राट् अशोक के अधीन था। इस प्रदेश को सेल्यूकस ने चन्द्रगुप्त मौर्य को भेंट में दिया था।

७. वैकेरेत- संस्कृत नाम- शकस्थान। अपभ्रंश नाम-सीस्तान (अफगानिस्तान)।

८. उर्व- अफ़गानिस्तान की काबुल घाटी में स्थित प्रदेश।

९. ख्नेन्त- अफ़गानिस्तान का कन्दहार (कंधार) क्षेत्र।

१०. हरह्वैति- संस्कृत नाम सरस्वती का यह फारसी उच्चारण है। यूनानी-अराकोशिया। इसी क्षेत्र के मध्य से सरस्वती नदी बहती है। ईरान में इसे अर्गन्दाब नदी कहते हैं। यह भारत में स्थित ब्रह्मावर्त क्षेत्र (हरियाणा-पंजाब) की सरस्वती से भिन्न है।

११. हेतुमन्त- संस्कृत नाम- सेतुमन्त। यूनानी-एतुमन्द्रास। अफगानिस्तान का वह क्षेत्र जहाँ हेलमन्द नदी प्रवाहित है। उसी के नाम पर हेलमंद प्रदेश का भी नाम है। इस क्षेत्र का ऐतिहासिक नगर ग़ज़नी है।

१२. रघ- यह ईरान की राजधानी तेहरान का उपनगर 'राए' का क्षेत्र है। यह प्राचीन नगर है। यूनानी नाम-रगह है।

१३. कख्र- संस्कृत नाम-चक्र। कैस्पियन सागर (कश्यप सागर) के पश्चिम में स्थित अजरबेजान देश की कुर घाटी का क्षेत्र।

१४. वरेन- एक मतानुसार- आधुनिक बुनेर (पाकिस्तान)। दूसरे मतानुसार -अटक के ऊपर सिन्ध और पंजकोर नदियों के मध्य का क्षेत्र, जहाँ पंजकोर काबुल नदी में मिलती है। वैसे यह बुनेर के निकट ही है।

१५. हप्तहेन्दव- संस्कृत नाम- सप्तसिन्धु/सप्तसिन्धव:। आर्यों का वह निवास क्षेत्र जहाँ सिन्धु और उसकी छह सहायक नदियाँ प्रवाहित हैं। यह संयुक्त भारत-पाकिस्तान का समस्त उत्तर-पश्चिम क्षेत्र है। वे नदियाँ हैं- सिन्ध (सिन्धु), चिनाब (चन्द्रभागा), रावी (परुष्णी), सतलुज (शतद्रु), झेलम (वितस्ता), व्यास (विपासा), सरस्वती।

१६. रंह- संस्कृत नाम- रसा (रसा नदी का क्षेत्र)। यूनानी- जक्सरटीज। एक मत में- रसा= सर दरिया (भद्रसोमा, जक्सरटीज का क्षेत्र)। दूसरे मत में- काश्मीर की सेविका नदी और उसका क्षेत्र।

आर्यों की ईरानी शाखा के उक्त प्रव्रजन के समान आदित्यवंशी देवों अथवा मनुवंशियों ने भी हिमालय से उतरकर चारों दिशाओं में प्रव्रजन किया था। वे गंगामार्ग तथा काश्मीर आदि अन्य मार्गों से भरतखण्ड में आये और यहाँ अपने निवास बनाये। यह आवागमन बाद तक चलता रहा। महाभारत में सुमेरु से आर्यावर्त आने की महर्षि व्यास की यात्रा का स्पष्ट वर्णन है (शान्तिपर्व ३२५.१४, १५; भीष्मपर्व ९.५-८)।

पाण्डवों के स्वर्गारोहण अर्थात् हिमालय पर जाने का वृत्तान्त है। 'चरक संहिता' में विवरण दिया है कि आर्य ऋषि मूलत: हिमालय पर निवास करते थे। उन्होंने गंगा मार्ग से आकर भारत-भाग में निवास करना चाहा, किन्तु जलवायु अनुकूल न होने से वे अस्वस्थ हो गये तो पुन: अपने मूल स्थान हिमालय पर लौट गये। वे वही ऋषि थे जो आर्यों के मूल गोत्र प्रवर्तक हैं। वे थे- भृगु, अंगिरा, अत्रि, वशिष्ठ, कश्यप, अगस्त्य, पुलस्य, वामदेव, असित, गौतम आदि (चिकित्सा स्थान २.४.३)

महर्षि दयानन्द ने अपने मन्तव्य में स्पष्ट लिखा है कि आदिसृष्टि हिमालय के 'त्रिविष्टप अर्थात् तिब्बत' में हुई। जब वहाँ परस्पर उपद्रव होने लगे तो आर्य लोग भारतभूमि को उत्तम जानकर यहाँ बस गये। इसी से इस देश का नाम '**आर्यावर्त**' हुआ (सत्यार्थप्रकाश सप्तम समुल्लास)। उन्होंने ''**देवासुराः संयत्ता आसन्**'' उद्धरण देकर देवों-असुरों के उपद्रवों की घटना का संकेत भी किया है। आर्यों के इतिहास में इनका युद्ध प्रव्रजन का एक प्रमुख कारण रहा है।

मध्य एशिया और यूरोप तक आर्य बस्तियों का विस्तार हुआ। एशिया माइनर के 'बगजकोई' स्थान पर हिटीशिया और मिलानी बादशाहों के सन्धिपत्र (ईस्वी पूर्व १४००) खुदाई में मिले हैं। उनमें मित्र, वरुण, इन्द्र, नासत्य आदि वैदिक देवताओं को स्मरण किया गया है (रॉयल एशियाटिक सोसाइटी जर्नल सन् १९९०, पृष्ठ ७२१)

'**बाइबिल**' में अपने मूल निवास को स्मरण करते हुए लिखा है-

''And the whole was of one language and of one speech, and it came to pass as they journeyed from the East.'' (Genisis, VI)

अर्थात्- 'हम सबकी एक बोली एवं भाषा थी और हम अतीत में पूर्व दिशा से चलकर यहाँ आये हैं।' पश्चिमी योरोपीय देशों की पूर्व दिशा हिमालय ही है और उस समय सबसे प्राचीन एक भाषा वैदिक संस्कृत ही थी और वही बोली जाती थी, क्योंकि उसी भाषा के वेद सर्वाधिक प्राचीन ग्रन्थ हैं।

उपर्युक्त साहित्यिक, ऐतिहासिक, पुरातात्विक और धार्मिक विवरणों के अतिरिक्त अन्य ठोस प्रमाण भी उपलब्ध हैं जो यह जानकारी देते हैं कि प्राचीन अतीत में एशिया, यूरोप, भारत आर्यों के देश थे और वे सजातीय रूप में साथ रहते थे। कुछ महत्त्वपूर्ण प्रमाण द्रष्टव्य एवं स्मरणीय हैं-

प्रथम- पारसी, यहूदी, ईसाई, मुसलमान और भारत के सभी मत-मतान्तर अपने वंश का एक ही मूल मानते हैं। वे सभी ब्रह्मा अर्थात् आदिम को उच्चारण भेद से '**आदम**' और मनु: को '**नूह**' अपना आदिपुरुष स्वीकार करते हैं। अनेक देश मिस्र आदि स्वयं को सूर्यवंशी और अन्य चन्द्रवंशी मानते हैं। ये वंश मनु वैवस्वत की सन्तानों से चले हैं।

द्वितीय- सभी की भाषाएँ परस्पर सम्बद्ध हैं, जो यह सिद्ध करता है कि उनकी मूलभाषा एक है। कभी वे साथ रहते थे और एक भाषा बोलते थे। भाषा वैज्ञानिकों ने उसे 'भारोपीय वर्ग' स्वीकार भी कर लिया है।

तृतीय- आदि सृष्टि का प्रथम राजा मनु स्वायम्भुव था तो जल प्रलय के बाद का आदि राजा मनु वैवस्वत था। वैवस्वत मनु के समय हिमालय और सम्बद्ध क्षेत्रों में प्राकृतिक आपदा जलप्रलय/हिमप्रलय के रूप में आई थी। वह भयावह घटना वैदिक साहित्य में अंकित है। विश्व के लगभग सभी ग्रन्थों/देशों के साहित्य में वह किसी-न-किसी रूप में सुरक्षित है। यह विवरण जानकारी देता है कि उन मतों/देशों के लोग पहले हिमालय क्षेत्र में साथ निवास करते थे और उनकी एक संस्कृति थी। वे हैं- संस्कृत ग्रन्थ, अवेस्ता, बाइबिल, कुरान आदि। देश हैं-चीन, उत्तर अमेरिका, दक्षिण अमेरिका, आस्ट्रेलिया, ब्रह्मा, इंडोचीन, मलाया, मलेशिया, पालीमेशिया, पारस, सुमेरियन, आइसलैण्ड, वेल्स, एशिया देश, यूरोपीय देश, अफ्रीकी देश, लिथुआनिया, असीरिया, न्यू गिनी, चाल्डिया बेबीलोनिया, सुमेरिया, यूनान, मिस्र आदि।

चतुर्थ- महाभारत और मनुस्मृति के वर्णनों के अनुसार वर्तमान के ये सब समुदाय मूलत: आर्य क्षत्रिय थे-पौण्ड्रक, औड्र, द्रविड़, कम्बोज, यवन, शक, पारद, पह्लव, चीन, किरात, दरद, खश, मेकल, लाट, शबर, बर्बर, दार्व, शौण्डिक, अन्ध्र शबर, पुलिन्द आदि (ऐतरेय ब्राह्मण ७.१८, महाभारत अनुशासन पर्व ३५.१७-१८, मनुस्मृति १०.४३-४४)। इनको अनार्य नहीं कहा जा सकता।

यह संक्षेप से आर्य समुदाय का आदिनिवास और प्रसार प्रदर्शित किया है। तब ''**कृण्वन्तो विश्वमार्यम्**'' था। अब स्थिति चिन्तन करने योग्य है।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रवचनमाला-४१

मृत्यु सूक्त-२६

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर

लेखिका - सुयशा आर्य

परोपकारिणी सभा के पूर्वप्रधान डॉ. धर्मवीर जी के वेद-विज्ञान के अन्तर्गत प्रसारित व्याख्यानों की जनोपयोगिता को ध्यान में रखकर 'परोपकारी' में प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यानों के लेखन का कार्य उनकी ज्येष्ठ पुत्री सुयशा आर्य कर रही हैं। सम्पादक

इमे जीवा विमृतैराववृत्रन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य।
प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।।

ऋग्वेद के दशम् मंडल के १८ वें सूक्त के तीसरे मन्त्र पर हम विचार कर रहे हैं। यह सूक्त मृत्यु सूक्त के नाम से प्रसिद्ध है। इसका ऋषि यामायनः तथा देवता मृत्यु है। **इमे जीवा विमृतैराववृत्रन्...**। हम जो जीव लोग हैं, हमने अपने को मृत्यु से बचा लिया है। **अभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य** हमने जो परमेश्वर से माँगा था, हमें मिल गया है। **प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय।** हमारा जितना आगे का जीवन है वह प्रसन्नता वाला हो, हँसने-गाने वाला हो, प्रसन्नता से नाचने वाला हो, श्रेष्ठ हो। सामान्य शब्दार्थ बिल्कुल भी कठिन नहीं है। जो भी इस मन्त्र को पढ़ेगा, उसे बहुत अच्छा लगेगा। इसमें हमारे लिए जो चिन्तन करने की बात है, इसके अन्दर गहराई से जो विचार करने की बात है वह है **'इमे जीवा विमृतैराववृत्रन्'** कहता है कि ये जीव मृत्यु से बच गए। वो कैसे बचे, उन्होंने अपने को कैसे बचाया? यहाँ मन्त्र के शब्द हैं-**इमे जीवाः**,- जैसा कि हम जानते हैं कि ऐसा कोई प्रयोग तो भाषा में होता नहीं जो सब काल, सब लिंगों में, सब वचनों में, सबमें एक ही से काम चल जाता हो। कोई भी प्रयोग होगा तो काल विशेष में होगा, व्यक्ति विशेष के लिए होगा। जो परिस्थिति है उसको बताने के लिए कोई शब्द काम में आता है, लेकिन मन्त्रों का जब हम अर्थ करते हैं, तो जो कहने वाला है वह ईश्वर है। वह सबके लिए, सदा के लिए कह रहा है। वह जिनके लिए कह रहा है वो भी सदा के रहने वाले हैं, क्योंकि यह जो प्रजा है, यह भी उतनी ही पुरानी है जितना पुराना देव है, ईश्वर है। यजुर्वेद में एक मन्त्र आता है-

स पर्यगात्... शाश्वतीभ्यः समाभ्यः इस मन्त्र को हम परमेश्वर की सिद्धि में काम में लेते हैं, इसमें समझाया गया है कि वह परमेश्वर नस नाड़ियों के बन्धन से रहित है, उसके अन्दर कोई विकार नहीं आता है, उस मन्त्र का भाग है- **शाश्वतीभ्यः समाभ्यः**। अर्थात् उसने यह ज्ञान दिया, उसने यह ज्ञान 'समा' अर्थात् 'प्रजा' के लिये दिया। वह प्रजा कैसी है, शाश्वत है, क्योंकि कोई भी बड़ा तभी तक होगा जब तक कोई छोटा है। यदि छोटे का अस्तित्व न हो तो बड़े का अस्तित्व नहीं हो सकता। कोई शासक है तो शासित होना चाहिए, कोई ज्ञान देने वाला ज्ञानवान् है तो कोई बिना ज्ञानवाला या कम ज्ञान वाला या इस ज्ञान को चाहने वाला भी होना चाहिए, नहीं तो उस ज्ञान का कोई अर्थ नहीं रहता और यह ज्ञान देने वाला यदि शाश्वत है तो पाने वाला भी वैसा ही सदा रहने वाला होना चाहिए। एक के बिना दूसरे का कोई अर्थ ही नहीं बनता, अस्तित्व ही नहीं बनता। यह बहुत प्रसिद्ध मन्त्र है-

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम्।
कविर्मनीषी परिभूः स्वयम्भूर्याथातथ्यतोऽर्थान्
व्यदधात् शाश्वतीभ्यः समाभ्यः।।

यथातथ्यतो व्यदधात् जैसा-जैसा होना चाहिए- याथातथ्य, जैसा का तैसा बनाया है और किसके लिये बनाया है? **शाश्वतीभ्यः समाभ्यः** जो सदा ही रहने वाली है, सनातन है। **याथातथ्यतो अर्थान्**= जैसा उचित है, जैसा चाहिए, वैसा बनाया। यह 'बनाया' शब्द किसके लिए आया? वेद के लिए। क्योंकि वेद ही हमें संसार को बताता है, संसार को समझाता है। संसार की जो वस्तुएं हैं, उनका अर्थ, उनका संबन्ध, उनका उपयोग हमें वेद से समझ में आता है।

मनुष्य इस संसार में आता है तो उसके पास एक मध्यस्थ है, माता-पिता के रूप में, गुरु के रूप में, साथी के रूप में,

वह मेरे और अपरिचित संसार के बीच का जो (जानकारी ना होने के कारण) व्यवधान है, दूरी है उसे दूर कर देता है, वह निरन्तर मुझे वस्तुओं का ज्ञान कराता रहता है। मुझे यह पता भी नहीं चलता कि कौनसी अज्ञात वस्तु मेरे लिए कब ज्ञात हो गयी। यह निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। मेरे और वस्तु के बीच में अज्ञान है और उस अज्ञान को दूर करने वाला भी है तो मेरा अज्ञान दूर होता है।

दो बातें इसमें हैं- जब मेरा अज्ञान दूर होगा, ज्ञान प्राप्त होगा तभी मेरा वस्तु से संबन्ध होगा। ज्ञान होने पर ही मैं उस वस्तु के उपयोग-अनुपयोग के बारे में सोचूँगा। दर्शन में जब ज्ञान की स्थिति समझाई जाती है तो वहाँ यही समझाया गया है कि जब ज्ञान हो जाता है तब उसका फल, हान-उपादान, उपेक्षा बुद्धि के रूप में होता है अर्थात् या तो हम उस वस्तु को काम की है तो स्वीकार करते हैं, काम की नहीं है, हमारे लिए हानि करती है तो हम उसे दूर करने का यत्न करते हैं और न हानिकर है, न लाभकर है तो ऐसी वस्तु के प्रति हम उदासीनता का भाव रखते हैं। **उपेक्षा बुद्धयः फलम्** अर्थात् हमारे ज्ञान के तीन परिणाम होते हैं, तीन तरह से उसका फल मिलता है।

कोई भी वस्तु हम जब तक जानेंगे नहीं, तो हमारे काम की है, नहीं है, हानिकर है यह भी हम नहीं जान सकते। इसलिए जैसे आज हमको कोई व्यक्ति इन वस्तुओं से परिचित कराता है वैसा प्रारम्भ में भी परिचय कराने वाला होना चाहिये। यदि बिना परिचय कराने वाले के परिचय हो सकता था, तो आज भी हो जाता। लेकिन किसी भी व्यक्ति को, संसार में जब तक कोई बात सिखाई नहीं जाती, बताई नहीं जाती तो उसकी समझ में नहीं आती। वह वर्षों, पूरे जीवन उस वस्तु के सम्पर्क में रहता है, लेकिन उसके हानि-लाभ का परिचय न होने से, उसके गुण-दोषों की जानकारी न होने से उसका कोई उपयोग नहीं कर पाता। इसलिए जैसे आज कोई बताने वाला मुझे वस्तु के गुण-दोषों का ज्ञान कराता है, वैसे ही पहले दिन भी ऐसा होना चाहिए।

तो पहले दिन कौन होगा? वस्तु भी थी और जिसको जानना है वो भी था अब इसको बताएगा कौन, समझाएगा कौन? वस्तु के गुण-धर्म के ज्ञान से जोड़ेगा कौन? इसलिए मनु महाराज ने कहा था-

सर्वेषां तु नामानि कर्माणि च पृथक्-पृथक्।
वेदशब्देभ्य एवाऽदौ पृथक् संस्थाश्च निर्ममे।

जो भी संसार में मनुष्य है, जो भी संसार में वस्तुएँ हैं, पदार्थ हैं, उनके सम्बन्ध को समझाने का काम परमेश्वर ने वेद के माध्यम से किया था, वेद के माध्यम से इस संसार का ज्ञान दिया था। **वेद शब्देभ्यः एवादौ**-प्रारम्भ में वेद के शब्दों से उन अर्थों से परिचय कराया था। **शाश्वतीभ्यः समाभ्यः याथातथ्यतो अर्थान् व्यदधात्** प्रजाओं के लिए, वेद के इन मन्त्रों के द्वारा उन रहस्यों को, उन नियमों को, उन बातों को समझाया गया।

यहाँ जो यह वेद का मन्त्र है इस वेद मन्त्र के द्वारा मनुष्य को समझाया गया है **इमे जीवा विमृतैरावव्रत्रन्...** कोई भी मनुष्य अपनी इस मृत्यु को हटा सकता है, दूर कर सकता है पीछे ले जा सकता है और हम ऐसा करने में समर्थ हुए हैं, सफल हुए हैं। यह सफलता हमें भी मिल सकती है, यह इस मन्त्र में समझाया गया है।

हमें कार्य और कारण को समझना पड़ेगा। जब भी कोई कार्य होता है तो उसका एक निश्चित कारण होता है। उस कारण के प्राप्त करने से, कारण के उपस्थित होने से कार्य होता है और यदि हम कार्य चाहें और कारण का हमें पता न हो तो हमें सफलता नहीं मिल सकती। हमें सफलता के लिए उस कार्य-कारण संबन्ध का बोध होना चाहिए। यहाँ हमको कहा गया कि हमें रोग, दुःख, शोक, मृत्यु असुविधायें प्राप्त हुई हैं तो इनको दूर भी किया जा सकता है। जब छोटे-मोटे दुःख दूर हो सकते हैं तो बड़ा दुःख भी दूर हो सकता है और इसे दूर करने का उपाय इस मन्त्र में समझाया गया है। इस मन्त्र के माध्यम से उस एक सफल व्यक्ति की बात की गई है जिसने इस कार्य में पूर्णता प्राप्त की है। जब कोई आदमी सफलता प्राप्त करता है तो उसको प्रसन्नता होती है और वह प्रसन्नता उसकी सफलता का ज्ञापक है, प्रदर्शक है, बताने वाला है। इस मन्त्र में **'इमे जीवा'** जो शब्द है यह सबके लिए है, उनके लिए विशेषरूप से जिन्होंने इस सफलता को प्राप्त किया है। इसको ऐसा भी पढ़ सकते हैं-**वयं जीवा विमृतैरावव्रत्रन्...**। आज हमने उस मृत्यु को जीत लिया है, अपने से परे हटा दिया है तो हम उस सफलता वाले जीवन को प्राप्त कर सके हैं। तो मन्त्र का पहला चरण यह बता रहा है कि वे जीव जिन्होंने अपनी मृत्यु को परे कर दिया है, उनका व्यवहार कैसा है।

कुछ तड़प-कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

अवैदिक मतों से वैदिक धर्म का एक विशेष भेद- सन् १९६५-६६ में हमने परोपकारी मासिक, दैनिक प्रताप, वैदिक धर्म साप्ताहिक उर्दू में इस विषय पर कुछ लेख दिये। उन लेखों को सन् १९६८ में पुस्तक रूप में प्रकाशित किया। पूज्य पं. गंगाप्रसाद जी उपाध्याय, श्रद्धेय पं. धर्मदेव जी विद्यामार्तण्ड और स्वामी सत्यप्रकाश जी ने दिल खोलकर इसके लिये लेखक को आशीर्वाद दिये। तब से लेकर अब तक इसके कई संस्करण तथा अनुवाद भी छप चुके हैं। इन्हीं दिनों दिल्ली से प्रकाशित इसके नये संस्करण को पढ़कर एक युवा पाठक ने पूछा है कि आपने नई शैली से वैदिक धर्म की विशेषतायें बताते हुये इसके अन्य मतों से भेद बहुत रोचक शैली में बताये हैं। कुछ और विचारणीय, पठनीय महत्त्वपूर्ण भेद बताने की कृपा करें।

हमने परोपकारी में उसकी इच्छा पूरी करने का वचन दिया ताकि बहुतों का लाभ हो। सब आस्तिकवादी मत पंथ यह तो मानते हैं कि ईश्वर ने सृष्टि की रचना करते हुये मनुष्यों को वह सब कुछ दिया है जो उन्हें चाहिये, परन्तु ज्ञान सृष्टि की उत्पत्ति के समय नहीं दिया। **ज्ञान दिया तो बहुत समय बाद दिया गया।** तौरेत, ज़बूर, इञ्जील, कुरान अथवा नये-नये मतों के ग्रन्थ सब मनुष्यों की उत्पत्ति के लाखों वर्ष बाद में नाज़िल (उतरे) हुये।

महर्षि दयानन्द तथा प्राचीन सब ऋषियों का यह सिद्धान्त है कि परमात्मा ने सृष्टि उत्पत्ति के साथ ही आदि सृष्टि के चार ऋषियों की हृदय रूपी गुफा में एक-एक वेद का प्रकाश किया। महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों, पत्र-व्यवहार तथा शास्त्रार्थों-व्याख्यानों में बल देकर यह सिद्धान्त रखा गया है। **ईश्वर के दिये भोगों का उपयोग कैसे करना है इसका सद्ज्ञान दिये बिना रचना का लाभ ही क्या?**

इसके विपरीत बाइबिल में तो सृष्टि उत्पत्ति के समय ज्ञान दिया तो केवल यह कि Tree of Knowledge अर्थात् ज्ञान वृक्ष को कतई नहीं चखना। वेद में ज्ञान की महिमा के अनेक मन्त्र हैं। अभी कर्नाटक की यात्रा में एक व्याख्यान में लेखक ने इसी प्रश्न को उठाया तो श्रोताओं की अन्य मतों से वैदिक धर्म की यह विशेषता एकदम गले के नीचे उतर गई। आर्यसमाज के वक्ताओं व लेखकों में एक कमी यह आ गई है कि अब तुलनात्मक धर्म अध्ययन करके लिखने व बोलने वाले नहीं रहे। मेहता जैमिनी जी, आचार्य रामदेव जी तथा देहलवी जी की इस शैली को छोड़ने से आर्यसमाज पिछड़ रहा है।

कर्नाटक में आर्यसमाज का इतिहास- कोई १६-१७ वर्ष पूर्व कर्नाटक सभा की आज्ञा से इस सेवक ने कर्नाटक में आर्यसमाज का अत्यन्त खोजपूर्ण इतिहास लिखकर दिया। एक-एक घटना का सप्रमाण उल्लेख किया। आर्यसमाज के हुतात्माओं तथा आर्यों के संघर्षों व कष्ट-सहन का इतिहास वीररस, हृदयस्पर्शी शैली में वर्णन किया गया। उस ग्रन्थ का कन्नड़ में अनुवाद श्री डॉ. राधाकृष्णन् जी के विशेष प्रयास से अभी-अभी छपा है। इसका विमोचन गत २३ दिसम्बर को होना था। उन्हें कहा कि इतनी सर्दी में नहीं आ सकता सो ऋषि बोध पर्व पर विमोचन किया गया।

कहाँ-कहाँ से खोज-खोज कर खोद-खोद कर इसमें सामग्री लाकर दी गई है यह उस ग्रन्थ के पाठक ही जानते हैं व मानते हैं। कर्नाटक के प्रबुद्ध वर्ग के लिये अचम्भे की बात यही थी कि पूरे कर्नाटक के आर्यसमाज का घटनापूर्ण, सप्रमाण और विचारोत्तेजक इतिहास एक कन्नड़ विद्वान् ने नहीं बल्कि उत्तर भारतीय एक पंजाबी इतिहासकार ने कैसे लिख दिया?

उस समय हमें कहा गया था कि एक बार सारे कर्नाटक का भ्रमण करके सामग्री की खोज करके फिर लिखें। उन्हें कहा गया कि शोलापुर निवासकाल में ग्रामों में, नगरों में, कस्बों में, सागर तट कन्याकुमारी तक यात्रायें करते हुये यह सेवक आर्यसमाज के इतिहास की खोज, दस्तावेज़ों का संग्रह व साक्षात्कार लेने का कार्य खूब कर चुका है तथापि उनका कहा शिरोधार्य करके हम झोला उठाकर श्री श्रुतिप्रिय व श्री गोविन्द आर्य जी जैसे युवकों को लेकर पं.

लेखराम के पथ के पथिक बन गये।

आर्यसमाज के लोग एक शताब्दी से ऊपर समय तक यही लिखते रहे कि स्वामी नित्यानन्द जी की मैसूर यात्रा के समय कर्नाटक में आर्यसमाज का बीज बोया गया। हमने यह धमाका कर दिखाया है कि महर्षि जी के जीवनकाल में ही कर्नाटक में पहला आर्यसमाज स्थापित हो गया। उसके एक दर्जन से ऊपर प्रमाण दे दिये। दस्तावेज़ भी कुछ दे दिये और कहा आओ और दिखा देंगे।

पंजाब और उत्तरप्रदेश में आर्यसमाज बाद में पहुँचा उनसे पहले कर्नाटक में पहुँचा। अपने कथन की पुष्टि में तत्कालीन पत्रों के साथ-साथ ऋषि दयानन्द जी का प्रमाण भी उनके हाथ में थमा दिया।

इस इतिहास पर सवा सौ वर्षीय पं. सुधाकर जी की पौत्री आर्य स्कॉलर डॉ. सुमित्रा ने एक खोजपूर्ण पठनीय पुस्तक लिख डाली है। यह छपनी ही चाहिये। जो तथ्य किसी अन्य की पहुँच से परे थे और किसी को कभी दिखाई न दिये, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, पं. नरेन्द्र जी तथा पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय की आँखों से हमें दिख गये। **हल्लीखेड़** में सन् १९०३ में श्रीमान् ब्रह्ममुनि जी के सामने वीर शिरोमणि श्यामभाई के ननिहाल के एक सज्जन ने कहा, ''भाई जी यहाँ जन्मे थे।'' हमने कहा, ''**उनका जन्म भालकी में हुआ था।**'' डॉ. ब्रह्ममुनि जी ने कहा, ''मैं आप दोनों के बीच में क्या कहूँ?'' प्रभु की कृपा से उन्हें कहा, ''स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज आपके कुटुम्ब में सबको जानते थे। उन्होंने भाई जी का जन्म भालकी में हुआ, लिखा है। साथ के साथ बता दिया कि आपके परिवार के प्राचार्य कृष्णदत्त जी ने भी यही लिखा है।''

ऐसे कुछ प्रमाण सुनकर वह सज्जन गद्‌गद हो गये। एक राजस्थानी, संघर्षशील शहीद सरीखे आर्य पुरुष लालसिंह जी आर्य का वहाँ वाले चित्र हमसे माँग रहे हैं। वेंकटश्वर जी सरीखे बलिदानी बालक का चित्र माँगा सो दे आया। वे पूछते हैं, यह फोटो आपको कहाँ से मिला? दक्षिण के सिरमौर कौन-कौन से नेता, विद्वानों पर ऋषि की छाप लगी, यह हमारे ग्रन्थ की विशेष देन है। डॉ. सुमित्रा ने उन सबकी पूरी-पूरी जानकारी उपलब्ध करवा दी है। कर्नाटक में किस-किस ने ऋषि दर्शन किये? यह कौन जानता था? अब सप्रमाण प्रकाश डाल दिया है। जीवन की साँझ में कुछ तो ऋषि ऋण चुका सका।

पं. सरस्वतीनाथ जी कहाँ के थे?- क्या आर्यसमाज में कोई नया पुराना स्वाध्याय प्रेमी हमें यह बताने की कृपा करेगा कि पण्डित जी क्या गुजराँवाला नगर में जन्मे थे अथवा गुजराँवाला जनपद या आसपास के थे। यह तो हम जानते हैं कि उनकी आरम्भिक शिक्षा गुजराँवाला के सरकारी स्कूल में हुई थी। वहाँ आर्यसमाज के आरम्भिक काल के एक सदस्य मास्टर दयाराम जी ने आपको पं. लेखराम जी के साहित्य का रसिक बनाकर वैदिकधर्मी बना दिया। इनके वंशजों को कोई जानता हो तो बताने की कृपा करे।

मान्य पं. सुधाकर चतुर्वेदी से भेंट- अभी-अभी मार्च के प्रथम सप्ताह में ट्रिब्यून अंग्रेज़ी में ११०-१११ वर्षीय एक वृद्ध के निधन पर उन्हें विश्व का सबसे लम्बी आयु का व्यक्ति बताया गया है। ऐसे समाचार पहले भी छपते रहे हैं। यह भ्रम है। यह सत्य व तथ्य नहीं है। हम समझते हैं कि आर्यसमाज बहुत पिछड़ चुका है। पहले इसका प्रचार तन्त्र ऐसा था कि सामने कोई टिकता ही नहीं था।

श्री पं. सुधाकर जी चतुर्वेदी बैंगलूर के प्रकाण्ड आर्य विद्वान्, बहुभाषाविद् और स्वतन्त्रता सेनानी रहे हैं। कई बार जेल गये। स्वामी श्रद्धानन्द जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज दोनों के शिष्य रहे। इस समय सवा सौ वर्ष के लगभग हैं। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी का शिष्य होने से इस सेवक को गुरु भाई बताया करते हैं। इसी कारण भावुक हृदय से दो बार मेरा सम्मान कर चुके हैं। गाँधीजी, सरदार पटेल, रवीन्द्रनाथ ठाकुर आदि बड़े-बड़े नेताओं के साथ रहे। राष्ट्रपति वी.वी.गिरि एक बार उनके निवास पर उपदेश लेने आये थे। पत्रकार उनका साक्षात्कार लेने प्रायः आते रहते हैं। परोपकारी में वर्ष में एक आध बार उनकी चर्चा होती है। आर्यसमाज में और कौन उन्हें याद करता है।

इस वृद्ध विद्वान् ने आर्यसमाज को सहस्त्रों पृष्ठों का साहित्य गद्य-पद्य में दिया है। ५१ वर्ष पूर्व श्री डॉ. अशोक जी को हमने उनके दर्शन करवाये थे। तब अशोक जी के बाल काले थे। वह युवक थे। अब पं. सुधाकर जी के बाल तो पचास वर्षीय व्यक्ति जैसे हो चुके हैं। बड़े-बड़े

नेता उनसे मिलने, दर्शन करने अब भी आ जाते हैं। राष्ट्रपति जी घर पहुँच गये, परन्तु आर्यसमाज का तो एक ही नेता बिन बुलाये उनके दर्शनार्थ उनके निवास पर पहुँचा। वे थे श्री महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज। आप आयु में पूज्य पण्डित जी से दस वर्ष बड़े थे। लाहौर से ही दोनों एक-दूसरे को जानते थे।

पण्डित जी की पौत्री सुनीता ने महात्मा जी के आगमन पर बहुत श्रद्धा से उनको भोजन करवाया। महात्मा जी पं. सुधाकर जी के अनुरोध को टाल न सके और वहीं भोजन करना स्वीकार किया। यह मिलन सन् १९७५ से कुछ पहले का है। अभी हमने श्री मास्टर आत्माराम जी, महात्मा आनन्द स्वामी जी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, लाला गोविन्दराम जी के संस्थान विषयक उनसे पर्याप्त प्रश्न पूछे और जानकारी प्राप्त की।

पण्डित जी की पौत्री डॉ. सुमित्रा जी ने पत्रकारों व गवेषकों के बार-बार के आग्रह कि पण्डित जी के जन्म की निश्चित तिथि व वर्ष के लिये उन्हें कहा कि स्रोत तो कई हमारे पास हैं। पण्डित जी शरीर की निर्बलता व जीर्णता के होते हुये भी सब प्रश्नों का उत्तर देते हैं, परन्तु अब जिज्ञासु जी आयेंगे तो इनके सब पुराने संगी साथियों व गुरुजनों तथा पुराने दस्तावेज़ों के आधार पर अधिक से अधिक जानकारी देते जायेंगे। हमने वहाँ बताया कि हमारी अल्पमति व जानकारी के अनुसार पण्डित जी का जन्म सन् १८९७ का (पं. लेखराम का बलिदान काल) है।

पण्डित जी ने तीन बार अपनी जीवनी लिखने का प्रयास किया, परन्तु वे पाण्डुलिपियाँ सड़ गईं। सौभाग्य से फिर उनके बहुत पुराने लेखों से कई महत्त्वपूर्ण सूत्र हमें मिल गये। एक पुराना हस्तलेख मिल गया। उसमें लिखा था कि लाहौर में १९३५ में मैं ३८ (अड़तीस) वर्ष की आयु का था। आयु के बढ़ने से मनुष्य बहुत कुछ भूल भी जाता है। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी से पहले पहल कब भेंट हुई? इस विषय में पण्डित जी स्मृति-दोष से चूक कर गये। हमने स्वामी सर्वानन्द जी, पं. धर्मपाल जी, पं. नरेन्द्र जी आदि कई एक के प्रमाण देकर पण्डित जी की चूक का सुधार कर दिया। वहीं पण्डित जी के पुराने दस्तावेज़ जो उलट-पुलट कर देखे तो पं. नरेन्द्र जी आदि के कथन की पुष्टि हो गई।

एक अद्‌भुत उत्तर- हमने श्री महाशय खुशहालचन्द जी तथा महात्मा आनन्द स्वामी जी महाराज का चित्र चित्रण करने को कहा तो मुस्कान बिखेरते हुये आपने बड़ा सुन्दर उत्तर दिया। यह पूछा, ''क्या आपको कभी मृत्यु का कुछ आभास हुआ है कि कब तक और जियेंगे?''

पण्डित जी हँसते हुये पूरे आत्मविश्वास से बोले, ''मुझे अभी जाने की कोई जल्दी नहीं है। जब कुछ आभास होगा तो बता दूँगा।''

प्रत्येक प्रहार का प्रतिकार हो- उ.प्र. बदायूँ से श्री पारसनाथ जी ने चलभाष पर कई प्रश्न पूछते हुये मिर्जा गुलाम अहमद की एक पुस्तक से आर्य धर्म पर तीखे आक्षेपों की चर्चा की। मेरे साहित्य में मिर्ज़ाई मत के आक्षेपों का उत्तर मिलेगा। कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर का दूसरा भाग भी दो मास में प्राप्य होगा। सब आक्षेपों के उत्तर प्रत्युत्तर पढ़ लो, हम कई बार लिख चुके हैं कि देश-विदेश में विधर्मियों के चैनल आर्यसमाज पर आक्रमण कर रहे हैं। परोपकारी में उत्तर हम देते हैं और क्यों चुप हैं?

कहाँ से सामग्री ली?- आर्य-पत्रों में लेखकों की विचित्र प्रवृत्ति देखी जा रही है। वेद पर कोई लेख दे या वैदिक सिद्धान्तों पर, देहलवी जी पर लिखें या किसी और महापुरुष पर, अथवा मनुस्मृति पर कोई यह प्रमाण नहीं देता कि उसकी जानकारी का स्रोत क्या है। भक्त फूलसिंह के साथ हरफूलसिंह पढ़कर मेरे से प्रश्न पूछा गया। मैंने कहा, मुद्रण दोष तो यह हो नहीं सकता। लेखक ने हरफूल सिंह जुलानी वाले को साथ जोड़ा होगा। यह कविता तो है नहीं। पहले स्रोत बताना, प्रमाण का पता देना गौरव की बात थी अब प्रमाण का स्रोत का पता न देना बड़प्पन का चिह्न है।

सूर्यनगरी, अबोहर, पंजाब।

मिथ्या बात के प्रचार से अनर्थ बढ़ता है

जो मिथ्या बात न रोकी जाए तो संसार में बहुत से अनर्थ प्रवृत्त हो जायँ। (स. प्र. भू.)

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग–साधना शिविर

दिनांक : १६ से २३ जून २०१९

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान–विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधकों–बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग–साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक–दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य–सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि–उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
६. बाह्य–वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे– समाचार–पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
७. किसी प्रकार का शारीरिक रोग यथा– खाँसी, जुकाम अथवा अन्य कोई ध्वनि उत्पादक रोग वाले को प्रवेश नहीं दिया जायेगा।
८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
९. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन–सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
१०. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ– परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) कार्यालय से (०१४५–२४६०१६४) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता–बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्–पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष चाहने वालों को अतिरिक्त शुल्क १००० से २००० रु. देय होता है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने–ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक),

लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने-पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १००० रु. मात्र जमा करना होगा। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (०१४५-२६२१२७०) में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४

: मार्ग :

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

email:psabhaa@gmail.com

संयोजक

एक आहुति अपने आचार्य के लिए.....

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गोशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की निःशुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें।

मन्त्री

'सत्यार्थ प्रकाश' में 'सदाचार' का सन्दर्भ

डॉ. निर्मल कौशिक

इस संसार में मनुष्य ही सब जीवों में श्रेष्ठ माना गया है। मनुष्य ही अपने विवेक के कारण सभी जीवों में विकास के पथ पर आगे बढ़ा है। सामाजिक प्राणी होने के नाते सभ्यता और संस्कृति के माध्यम से उसने नैतिक और अनैतिक बातों की पहचान करना सीख लिया है। ग्रन्थों में कहा गया है कि मानव जीवन अमूल्य है। अनेक योनियों के पश्चात् यह दुर्लभ मानव शरीर प्राप्त होता है। तुलसीदास जी कहते हैं-

बड़े भाग मानुष तनु पावा, सुर दुर्लभ सब ग्रन्थ हि गावा।

यह मानव शरीर देवताओं को भी दुर्लभ है। अन्य प्राणियों में सभी क्रियाएँ जैसे खाना, पीना, सोना, मैथुन आदि क्रियाएँ तो समान हैं लेकिन विवेकशील होने के कारण मनुष्य इन प्राणियों से अधिक विकसित हो गया है। संस्कृत के किसी विद्वान् ने ठीक ही कहा है कि धर्म के कारण ही मनुष्य अन्य जीवों से श्रेष्ठ है।

आहार निद्रा भय मैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिः नराणाम्।
धर्मो हि तेषामधिको विशेषो धर्मेण हीनाः पशुभिः समाना।।

अब प्रश्न यह पैदा होता है कि क्या सभी मनुष्य सभ्य अथवा विवेकशील होते हैं? उत्तर है नहीं। कुछ मनुष्य का शरीर होते हुए भी पशुवत् व्यवहार करते है। वे असभ्य कहलाते हैं। वे दूसरों पर अत्याचार करते हैं, दुष्कर्म करते हैं। मन, वचन और कर्म से दूसरों को आहत करते हैं। ऐसे मनुष्य सभ्य समाज में रहने लायक नहीं हैं। अच्छा मानव बनने के लिए मानवीय गुणों का होना आवश्यक है। मानवीय गुण नैतिकता पर आधारित होते हैं। इन्हें सद्गुण भी कहा जाता है। इसी से मानव का आचरण और व्यवहार बनता है। अच्छे व्यवहार और आचरण के कारण ही मनुष्य सभ्य कहलाता है और समाज में आदर पाता है। ऐसे मनुष्य में विनम्रता, मधुरता, सहयोग, दया, त्याग, प्रेम आदि गुण स्वतः आ जाते हैं। मनुष्य की वाणी और व्यवहार ही उसकी पहचान कराते हैं कि मनुष्य कितना सभ्य है। दूसरे शब्दों में इसे शिष्टाचार अथवा सदाचार भी कहा जाता है। इसके विपरीत आचरण करने वाला दुराचारी अथवा अनाचारी कहलाता है। सदाचारी मानव का स्वरूप जानने के लिए हम स्वामी दयानन्द जी के लोकप्रिय ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' के 'दशम समुल्लास' के आधार पर चर्चा करेंगे।

स्वामी दयानन्द जी ने सदाचार और अनाचार पर अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा है। शुभ सत्कर्म और उत्तम कर्म ही सदाचार हैं और इसके विपरीत दुष्ट और बुरा कर्म (दुष्कर्म) ही अनाचार है। उनका कथन है कि वेदशास्त्र के अनुकूल सदाचरण ही सदाचार है और इसके विपरीत आचरण अनाचार है। सदाचार से मन में प्रसन्नता और उत्साह मिलता है और अनाचार से मन में भय, शंका और लज्जा की अनुभूति होती है।

सदाचारी मनुष्य अपने जीवन में सत्कर्म करके समाज में सम्मान का अधिकारी होता है तथा समाज में प्रतिष्ठा का पात्र बनता है एवं उसका यशोगान होता है। स्वामी जी ने मन की स्वच्छता को सदाचारी मनुष्य के लिए आवश्यक माना है। सदाचारी मनुष्य कभी किसी के लिए बुरा नहीं सोचता है और न ही बुरा करता है। जहाँ तक सम्भव हो वह हर किसी का भला ही सोचता है और भला ही करता है। सदाचारी मनुष्य के लिए उन्होंने तन की स्वच्छता (स्नानादि) स्वच्छ वस्त्रधारण, शुद्ध खान-पान और बड़ों का सम्मान आवश्यक माना है। सदाचारी मनुष्य के लिए उन्होंने संस्कारों का होना आवश्यक माना है। सोलह संस्कारों से मनुष्य का शुद्धिकरण होता है। संस्कार का अर्थ है- परिष्कार, शोधन, शुद्ध अथवा पवित्र करना। स्वामी जी ने कहा है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य अपनी सन्तानों का गर्भाधान आदि संस्कार अवश्य करें। सदाचारी मनुष्य के लिए इन्द्रिय-निग्रह अर्थात् अपनी इन्द्रियों को वश में करना आवश्यक है। सत्यार्थप्रकाश में स्वामी जी लिखते हैं-

विद्वद्भिः सेवितः सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तन्निबोधत।।

अर्थात् मनुष्यों को सदा इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि जिसका सेवन रागद्वेष रहित विद्वत् लोग नित्य करें, जिसको हृदय अर्थात् आत्मा से सत्य कर्त्तव्य जानें, वही

धर्म माननीय और अनुकरणीय है।

स्वामी जी ने वेदों, स्मृतियों, शास्त्रों को सज्जन पुरुषों के व्यवहार, व आप्त वाक्यों को सदाचार की बातें बताने वाला कहा है। जिस कार्य को करने में प्रसन्नता प्राप्त हो और भय, लज्जा, शंका न हो वही सदाचार अथवा सत्कर्म है। मिथ्या-भाषण, चोरी आदि करना दुष्कर्म है।

वेदोऽखिलो धर्ममूलं स्मृतिशीले च तद्विदाम्।
आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च।।

अर्थात् सम्पूर्ण वेद, मनुस्मृति, ऋषि प्रणीत शास्त्र, सत्पुरुषों का आचार और जिस कर्म में अपना आत्मा प्रसन्न रहे (अर्थात् भय, शंका, लज्जा आदि जिसमें न हो) उन कर्मों को करना उचित है, क्योंकि वेद ही सब धर्मों का मूल है। स्वामी जी ने सदाचार के गुणों को धारण करने के लिए वेदवाणी का अध्ययन करने और वेदानुसार जीवन यापन करने पर बल दिया है। कहा भी है **'वेदानां सर्वविद्यानिधानं खलु।'** अर्थात् वेद सभी विद्याओं के भण्डार हैं। वेद पढ़ना और उनका अनुसरण करना मनुष्य को सदाचारी तो बनाता ही है साथ ही इहलोक में यश, सम्मान तथा परलोक में सर्वोत्तम सुख प्राप्त होता है। वेद पढ़ने से हमें नैतिक-अनैतिक का ज्ञान होता है। करणीय और अकरणीय कर्त्तव्यों का ज्ञान होता है। सत् और असत् का भी ज्ञान होता है।

श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः।
इह कीर्तिमवाप्नोति प्रेत्य चानुत्तमं सुखम्।।

सदाचाररहित मनुष्य को स्वामी जी ने नास्तिक कहा है, क्योंकि जो मनुष्य वेदों का अध्ययन नहीं करता वह सदाचारी नहीं हो सकता जो वेद की निन्दा करता है वह सद्गुणी नहीं हो सकता। इसीलिए वेदनिन्दक को नास्तिक कहा गया है। ऐसे मनुष्य का बहिष्कार कर देना चाहिए।

योऽवमन्येत ते मूले हेतु शास्त्राश्रयाद् द्विजः।
स साधुभिर्बहिष्कार्यो नास्तिको वेदनिन्दकः।।

अर्थात् जो कोई मनुष्य वेद और वेदानुकूल आप्तग्रन्थों का अपमान करे, उसको श्रेष्ठ लोग जाति बाह्य कर दें, क्योंकि जो वेद की निन्दा करता है वही नास्तिक कहाता है।

स्वामी जी ने सदाचारी मानव के लिए संस्कारों से सुसंस्कृत होना अनिवार्य माना है। संस्कार विधि में उन्होंने १६ संस्कारों की बात कही है। संस्कारों से जीवन में अच्छे गुणों का संचार होता है। सद्गुणी व्यक्ति ही सदाचारी हो सकता है।

वैदिकैः कर्मभिः पुण्यैर्निषेकादिर्द्विजन्मनाम्।।
कार्य्यः शरीरसंस्कारः पावन प्रेत्य चेह च।।

अर्थात् वेदोक्त पुण्यरूप कर्मों से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अपने सन्तानों का निषेकादि संस्कार करें जो इस जन्म वा परजन्म में पवित्र करने वाला है।

स्वामी जी ने जीवन में सदाचार के मार्ग पर चलने के लिए संयम का विशेष महत्त्व बताया है। संयम से ही मनुष्य अपने भटकाव को नियन्त्रण में ला सकता है। जिस प्रकार भटके हुए घोड़ों को सारथी रोककर सन्मार्ग पर ले आता है। उसी प्रकार इन्द्रियों को नियन्त्रित करने के लिए संयम द्वारा मनुष्य बुरे कर्मों से हटकर अच्छे कर्मों की ओर प्रेरित होता है।

इन्द्रियाणां विचरतां विष्येष्वपहारिषु।
संयमे यत्नमातिष्ठेत् विद्वान् यन्तेव वाजिनाम्।।

मनुष्य का यही आचार है कि जो इन्दियाँ चित्त का हरण करने वाले विषयों में प्रवृत्त कराती हैं, उन्हें रोकने का प्रयत्न करे, जैसे सारथी भटके हुए घोड़ों को रोककर सही (शुद्ध) मार्ग पर चलाता है।

इन्द्रियों को वश में करने वाला व्यक्ति समन्वयभाव से जीवन जीता है। वह मान-अपमान, निन्दा-स्तुति, हानि-लाभ, यश-अपयश सब स्थितियों में समान रूप से स्थिर रहता है। गीता में भगवान् श्री कृष्ण भी यही कहते हैं।

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते।।

गीता २.५६।।

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।

गीता २.६१

जो मनुष्य सत्य-भाषणादि कर्मों का आचरण करता है वही सदाचारी है। मनुस्मृति के अनुसार इसे परम धर्म कहा गया है।

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त्त एव च।।

जिस कर्म में लोकोपकार की भावना हो वही कर्म करना श्रेयस्कर है। हानिकारक कर्मों का परित्याग ही मनुष्य का मुख्य कर्त्तव्य है। सत्यार्थप्रकाश में कहा गया है कि सदाचारी मनुष्य कभी भी नास्तिक अर्थात् वेद निन्दक, लम्पट, विश्वासघाती, चोर, मिथ्यावादी, स्वार्थी, कपटी, छली आदि दुष्ट मनुष्यों का संग न करे। आप्त (महान्) महापुरुष, जो सत्यवादी, धर्मात्मा, परोपकारी और प्रियजन हैं उनका सदा संग करना ही श्रेष्ठाचार अथवा सदाचार है। यहाँ स्वामी जी ने सदाचार को ही श्रेष्ठाचार कहा है। आर्य पुरुष जैसा व्यवहार करता है उसे श्रेष्ठाचार कहा गया है। अतः आर्य से श्रेष्ठाचार ही अपेक्षित है। आर्य को सदा सदाचारी होना ही चाहिए। सरल शब्दों में आर्य वह है जो श्रेष्ठ आचरण करता है और वेद के बताए मार्ग पर चलता है।

सदाचारी मनुष्य का लक्षण बताते हुए स्वामी जी ने उसे विद्या ग्रहण करने वाला, धर्म के मार्ग पर चलने वाला, वैर न रखने वाला और मधुरभाषी होना बताया है। सत्य बोलने से ही धर्म की वृद्धि और अधर्म का नाश होता है।

अहिंसयैव भूतानां कार्यं श्रेयोऽनुशासनम्।
वाक् चैव मधुरा श्लक्ष्णा प्रयोज्या धर्ममिच्छता।।

अर्थात् विद्या पढ़, विद्वान्, धर्मात्मा होकर, निर्वैरता से सब प्राणियों के कल्याण का उपदेश करे और उपदेश में वाणी मधुर और कोमल बोले। जो मनुष्य अपने सत्योपदेश से धर्म की वृद्धि और अधर्म का नाश करते हैं वे पुरुष धन्य हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सत्यार्थप्रकाश के 'दशम समुल्लास' में स्वामी दयानन्द जी ने सदाचार और सदाचारी मनुष्य के लक्षण बताये हैं। उन्होंने वेदविद्या अध्ययन, सत्संगति, संस्कार, इन्द्रिय-निग्रह, सत्यभाषण, परोपकार, निर्वैरता, धर्म में आस्था आदि गुणों को सदाचारी मनुष्य के लिए अनिवार्य बताया है। आज की भावी पीढ़ी कदाचार और दुराचार के मार्ग पर चल पड़ी है। इसका कारण यह है कि हम उन्हें सदाचार का पाठ नहीं पढ़ा पा रहे हैं। 'सत्यार्थप्रकाश' जैसे अमूल्य ग्रन्थों के बारे में हमने उन्हें बताया ही नहीं। हमने उन्हें जीवन का सही मार्ग बताने वाले ग्रन्थों को पढ़ने की प्रेरणा ही नहीं दी। अच्छे संस्कार नहीं दे सके। इसीलिए समाज में भ्रष्टाचार बढ़ रहा है और सदाचार का ह्रास हो रहा है। अतः हमें अपनी भावी पीढ़ी को सद्गुणों से अलंकृत कर उन्हें सदाचारी बनाना होगा। बच्चों को संस्कारयुक्त बनाकर उन्हें आदर्श मानव और सुसंस्कृत नागरिक बनाना है। हमें स्वयं 'सत्यार्थप्रकाश' में वर्णित स्वामी दयानन्द जी के अमूल्य सन्देश को समझना होगा। इससे समाज में सदाचार का मार्ग प्रशस्त होगा। देश और समाज का भी उद्धार होगा। मानव समाज का उत्थान होगा।

पं. लेखराम के ग्रन्थ संग्रह

'कुल्लियाते आर्यमुसाफिर' का प्रथम भाग प्रकाशित

दूसरे भाग का प्रकाशन कार्य प्रगति पर

पं. लेखराम आर्यमुसाफिर का ग्रन्थ संग्रह ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' जो कि एक दुर्लभ ग्रन्थ बन चुका था, परोपकारिणी सभा ने उसे पुनः प्रकाशित करने का संकल्प लिया। जिसका सुखद परिणाम यह है कि इस अमूल्य निधि का प्रथम खण्ड महर्षि दयानन्द सरस्वती के १३५ वें बलिदान दिवस के अवसर पर छपकर तैयार हो चुका है। दूसरा भाग कुछ ही समय उपरान्त सुधी आर्यजनों को उपलब्ध होगा। इस ग्रन्थ के सम्पादन के गुरुतर कार्य में आर्यसमाज के ज्ञानवृद्ध विद्वान् व परोपकारिणी सभा के सम्मानित उपप्रधान प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु ने जो महनीय परिश्रम किया है, उससे इस ग्रन्थ की महत्ता में और अधिक वृद्धि हुई है। सभा उनका हृदय से आभार व्यक्त करती है। साथ ही जिन महानुभावों ने इस कार्य में अपना आर्थिक सहयोग प्रदान किया, उनका भी सभा धन्यवाद ज्ञापित करती है। सहयोगी जनों के नाम ग्रन्थ में प्रकाशित भी किये गये हैं।

अब जबकि दूसरा भाग छपने के लिये तैयार है, ऐसे में आर्यजन अपने सहयोग से इस ज्ञानयज्ञ को सम्पन्न करेंगे, ऐसी आशा है। - **मन्त्री**

अमर हुतात्मा महाशय राजपाल

कन्हैयालाल आर्य

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के बलिदान के डेढ़ वर्ष पश्चात् ईस्वी सन् १८८५ को अमृतसर में लाला रामदास के घर एक ऐसे पुत्ररत्न का जन्म हुआ जिसका नाम घसीटाराम रखा गया। बाद में हकीम फतहचन्द के सामने आपने अपने नाम परिवर्तन का प्रस्ताव रखा। हकीम जी का आप पर पुत्रवत् स्नेह था। उनके एक छोटे शिशु 'राजपाल' की मृत्यु हो गई थी। अत: उनके आग्रह से आपने विधिपूर्वक संस्कार करा कर अपना नाम 'राजपाल' रखा। तब से 'राजपाल' नाम से प्रसिद्ध हुए। किसी को कल्पना नहीं थी कि निर्धन कुल में जन्मा और एक साधारण अर्जीनवीस का यह पुत्र समाज के पृष्ठों पर अपनी अमिट छाप छोड़ेगा। पिताजी कहीं गृह त्याग कर चले गए। माता, छोटे भाई असहाय हो गये और इस कठिन अवस्था में वे केवल मिडिल पास ही कर पाए। विपत्तियों पर विपत्तियाँ परन्तु उस महान् नरपुंगव ने विपत्तियों के महान् विद्यालय में प्रशिक्षण पाया। उन दिनों शिक्षा प्रचार इतना नहीं था अत: मिडिल पास को भी आदर की दृष्टि से देखा जाता था। आपने किताब का व्यापार अपनाया और दिन-रात परिश्रम कर परिवार का भरण-पोषण करते रहे।

अमृतसर उन दिनों आर्यसमाज के प्रचार का एक गढ़ था। ऋषि दयानन्द स्वयं एक से अधिक बार अमृतसर पधारे थे। महाशय राजपाल जी पं. लेखराम द्वारा संचालित 'डिबेटिंग क्लब' के सदस्य बन गये। शैशवकाल से ही आप आर्यसमाज के मूर्धन्य विद्वान् मास्टर आत्माराम जी, महात्मा मुन्शीराम, स्वामी दर्शनानन्द जी महाराज जी के सम्पर्क में आये।

अमृतसर में एक बड़े प्रसिद्ध आर्यसमाजी हकीम फतहचन्द जी के पास १२ रुपये मासिक की नौकरी कर ली। आर्यसमाजी होने के कारण हकीम जी आपसे बहुत प्यार करते थे। एक बार होली के अवसर पर आप हकीम जी के पास बैठे थे। उसी समय होली पर अश्लील गीत गाते हुए एक टोली निकल रही थी। उस मंडली को विनम्रता और शान्ति से समझाते हुए उन्होंने कहा कि जिन अश्लील शब्दों का प्रयोग यहाँ कर रहे हो उनको क्या आप घर में बोल सकते हैं? महाशय राजपाल जी के इस प्रश्न को सुनकर लड़के बड़े लज्जित हुए। राजपाल जी ने उन्हीं लड़कों को लेकर 'बाल सुधार सभा' नाम का संगठन बनाया। इसमें वे न केवल सिक्खों बल्कि मुस्लिम छात्रों को भी चरित्र-निर्माण की शिक्षा दिया करते थे। मांस भक्षण के विरुद्ध कई बार शास्त्रार्थ किये और अपनी बुद्धिमता का परिचय दिया।

महाशय राजपाल जी के मन में महात्मा मुंशीराम के लिए बड़ी श्रद्धा थी। महात्मा मुंशीराम जी ने राजपाल में छिपी प्रतिभा को पहचाना। महात्मा मुंशीराम बलिदान मार्ग के पथिक थे तो राजपाल जी बाद में इसी पथ के राही बने। महात्मा मुंशीराम जी ने आपको १९०६ में 'सद्धर्म प्रचारक' का कार्यभार सौंप दिया। आर्यसमाज लाहौर के वार्षिकोत्सव पर महाशय कृष्ण जी से उनकी भेंट हुई। महाशय कृष्ण जी ने आपकी योग्यता से प्रभावित होकर आपको 'प्रकाश' पत्र का प्रबन्धक नियुक्त कर दिया। यह काल आर्यसमाज के लिए अग्नि-परीक्षा का काल था। उस समय अपने आप को आर्यसमाजी कहलाना अंग्रेज सरकार की नाराजगी को निमन्त्रण देना था, परन्तु प्रकाश के सम्पादक संचालक महाशय कृष्ण हों और प्रबन्धक महाशय राजपाल हों, फिर भय कैसा? आर्यों ने इस पत्र के माध्यम से सरकार के मांस-भक्षण तथा सेना में यज्ञोपवीत उतारने के आदेश का डटकर विरोध किया, सरकार को झुकना पड़ा। महाशय कृष्ण जी महाशय राजपाल से इतना अधिक प्यार करते थे कि जब तक महाशय कृष्ण जीवित रहे प्रतिवर्ष अपने प्यारे भाई राजपाल के बलिदान दिवस (६ अप्रैल) पर अपने दैनिक प्रताप में सम्पादकीय लिखते रहे।

प्रसिद्ध साहित्यकार एवं समाजसेवी सन्तराम जी बी.ए. महाशय राजपाल की निडरता और कार्यकुशलता का वर्णन करते हैं-एक समय था, जब आर्यसमाज पर बड़ी भारी विपत्ति आई हुई थी। आर्यसमाज को विद्रोही ठहराकर

ब्रिटिश सरकार कुचलने पर तुली हुई थी। पटियाला में आर्यसमाजियों पर राजद्रोह के अभियोग, सत्यार्थप्रकाश को जब्त किया जाना, लाला लाजपतराय को कारागार में डालना जैसे संकट आर्यसमाज पर छाये हुए थे उस समय आर्यसमाज बच्छोवाली के वार्षिकोत्सव पर महात्मा मुन्शीराम के भाषण को न केवल महाशय राजपाल ने नोट किया बल्कि महात्मा मुंशीराम की सिंह गर्जना को 'प्रकाश' आदि कई आर्य पत्रों में छापा। सरकार जानती थी और जनता को भी पता था कि महाशय राजपाल ने सारा व्याख्यान नोट किया है। उनकी इस निडर समाजसेवा को आर्यजगत् कभी भुला नहीं सकता। जब आपका 'सद्धर्म' में पहला सम्पादकीय छपा तब उनकी आयु मात्र २० वर्ष थी। वह दिन उनके हर्षोल्लास का दिन था।

हिन्दी के प्रति लगाव- महाशय राजपाल के काल में उर्दू का बोलबाला था, परन्तु आर्यसमाजी बनते ही आपने दिन-रात परिश्रम करके कुछ ही समय में हिन्दी पर पूर्ण अधिकार पा लिया। उन्हें चिन्ता थी केवल आर्यसमाज की, देश-सुधार की और परोपकार की। गुरुकुल कांगड़ी से पूर्ण रूपेण लगाव रहा और उस लगाव को आजीवन निभाया।

भक्तिदर्पण संग्रह एंव प्रकाशन संस्थान- महाशय राजपाल का कार्यक्षेत्र तो पंजाब ही रहा, परन्तु उनके लेखों के कारण विश्व में जहाँ-जहाँ आर्यसमाज थी उनका व्यक्तित्व व्यापक हो गया। उनके द्वारा संचालित 'आर्य पुस्तकालय व सरस्वती आश्रम' का एक गौरवपूर्ण इतिहास है। महाशय जी ने 'भक्ति दर्पण' नाम का एक संग्रह स्वयं सम्पादित किया। अब तक इनके ६५ संस्करण निकल चुके हैं। आर्यसमाज के सब विद्वानों ने 'भक्ति दर्पण' की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए इसकी भूरी-भूरी प्रशंसा की है। महाशय जी को लिखने की इतनी धुन थी कि वे सच्चे मिशनरी की तरह आर्यसमाज के सत्संगों में नोटबुक, कागज, पेन्सिल लेकर जाते थे। जो भजन उन्हें अच्छा लगता उसे नोट करते। उनके प्रकाशन संस्थान से भजनों की पुस्तक 'पुष्पांजलि' लाखों की संख्या में प्रकाशित होकर घर-घर पहुँची।

महाशय जी की विनम्रता एवं अन्य सम्प्रदायों के प्रति आदर भाव- महाशय जी की सफलता एवं लोकप्रियता के कारणों में उनकी विनम्रता, मिठास, परिश्रमी एवं सत्यनिष्ठ होना है। वे दूसरे सम्प्रदायों के धर्मग्रन्थों को आदर व मान से सम्बोधित करते थे। 'प्राचीन तहज़ीब और वैदिक धर्म की भूमिका' में जहाँ-जहाँ कुरान शब्द आया है उन्होंने आदरसूचक 'कुरान शरीफ' शब्द का प्रयोग किया है।

आर्य जन्तरी व डायरेक्टरी का प्रकाशन तथा अन्य प्रकाशन- महाशय जी के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्यों में से एक है 'आर्य जन्तरी व डायरेक्टरी' का प्रकाशन। देश और विदेश में आर्यसमाजों और आर्यसभाओं द्वारा संचालित संस्थाओं की अधिक से अधिक जानकारी देना इस डायरेक्टरी का उद्देश्य था। महात्मा हंसराज के व्याख्यानों व लेखों का संग्रह 'मोतियों का हार', स्वामी सर्वदानन्द जी के प्रवचनों का संग्रह 'आनन्द संग्रह' स्वामी दयानन्द के प्रवचनों व लेखों का 'सत्योपदेश माला', लाला दीवानचन्द के व्याख्यान संग्रह को 'फूलों का गुच्छा' नाम देना महाशय जी की साहित्यिक प्रतिभा थी।

महाशय राजपाल ने अपने सक्रिय जीवन में इतना कुछ सम्पादित किया कि यदि वह पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित किया जाये तो वह सामग्री ४५०० पृष्ठों से कम नहीं होगी। अन्य प्रकाशनों के अतिरिक्त स्वामी श्रद्धानन्द जी तथा महात्मा हंसराज जी की जीवनी उर्दू में पहली बार लिखी व प्रकाशित की।

लेखकों, कर्मचारियों से उनके सम्बन्ध मधुर थे- वीतराग स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज ने लिखा कि मैंने परम देशभक्त परमानन्द जी से पूछा, ''आप किताबें लिखते रहते हैं और प्रकाशकों को छापने के लिए देते भी हैं कहिये, क्या हाल है?'' उन्होंने उत्तर दिया- ''केवल महाशय राजपाल नियम से लेखकों को आदर व समय पर पैसे देते हैं, बाकी तो सब वैसे ही हैं।''

महाशय राजपाल के बलिदान के पश्चात् उनके एक मुसलमान मित्र अब्दुल रहीम ने उनकी संक्षिप्त जीवनी में लिखा- आप लेने-देने के विषय में ऐसे साफ थे कि आपका कभी किसी से लेन-देन के विषय में विवाद नहीं हुआ और जिन-जिन से आपका वास्ता पड़ा, वे सब आपकी मुक्त कंठ से सराहना करते थे। प्रैस मालिकों का आपमें

विशेष विश्वास था।

एक दूसरे मुसलमान मित्र ने लिखा है ''महाशय राजपाल अपने मुलाज़िमों (कर्मचारियों) से अच्छा व्यवहार करते थे। आप हर एक की जरूरत के वक्त उनकी मदद के लिए तैयार रहते थे।''

महाशय राजपाल का पुस्तकालय विद्वानों का संगम स्थल था। पंजाब के लोगों को अपने सभी कार्यों के लिए प्रदेश की राजधानी लाहौर आना पड़ता था। जब भी कोई आर्यसमाजी, आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय आता और महाशय राजपाल के 'आर्य पुस्तकालय सरस्वती आश्रम' न आये, ऐसा संभव नहीं था। यह पुस्तकालय एक दर्शनीय स्थल एवं प्रेरणास्रोत था।

सन् १९२३ में महाशय राजपाल जी ने अपने आर्य पुस्तकालय से उर्दू सत्यार्थप्रकाश पर दस हजार प्रतियों का संस्करण प्रकाशित किया। बाद में पाँच संस्करण और निकाले। इस तरह कुल ४० हजार सत्यार्थप्रकाश जिनके पृष्ठों की संख्या आठ सौ से ऊपर थी, लागत मात्र ८ आने उसका मूल्य रखा। इसी प्रकार महाशय जी ने उर्दू में संस्कार विधि, ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका आदि पुस्तकें भी प्रकाशित की।

प्रकाशन की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष- महाशय राजपाल ने प्रकाशन की स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राणों की बलि दी। उन दिनों मुसलमानों की ओर से दो ऐसी पुस्तकें प्रकाशित की गईं जिनमें योगेश्वर श्रीकृष्ण और महर्षि दयानन्द पर बहुत ही भद्दे और अश्लील शब्दों में कीचड़ उछाला गया था। महाशय राजपाल जी ने इसके उत्तर में 'रंगीला रसूल' नाम की पुस्तक प्रकाशित की। इस पुस्तक पर कुछ मुस्लिम उग्रवादियों के दबाव में ब्रिटिश सरकार ने मुकदमा चलाया। राजपाल जी प्रकाशन की स्वतन्त्रता के पक्ष में अन्त तक डटे रहे और अन्ततः हाईकोर्ट ने अपने ऐतिहासिक निर्णय में महाशय राजपाल को निर्दोष सिद्ध किया। इतिहास के प्रसिद्ध विद्वान् भाई परमानन्द जी द्वारा लिखित 'तारिखे ए हिन्द' के प्रकाशन पर आप पर मुकदमा चला। 'देश की बात' प्रकाशित करने पर मुकदमा चला। कई बार ब्रिटिश सरकार के कोपभाजन बने। जैसे डॉ. सत्यपाल जी द्वारा लिखित 'पंजाब बीती' अथवा 'जलियाँवाला बाग का हत्याकांड' भाई परमानन्द जी की 'काले पानी की कारावास की कहानी' आदि।

महाशय राजपाल अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान से सम्मानित- जिनेवा (स्विटज़रलैण्ड) में स्थित अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशन संघ ने कुछ वर्ष पूर्व यह निर्णय लिया कि संसार के सभी देशों के ऐसे प्रकाशक सम्मानित किए जाएँ, जिन्होंने विचारों के प्रकाशन की स्वतन्त्रता के लिए महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। सन् १८९८ में महाशय राजपाल जी को अभिव्यक्ति और प्रकाशन की स्वतन्त्रता के सम्मान के लिए मनोनीत किया गया। एक भव्य समारोह में भारत के तत्कालीन गृहमन्त्री लालकृष्ण आडवाणी ने इसे मरणोपरान्त महान् सम्मान का प्रशस्ति पत्र और सम्मान चिह्न महाशय राजपाल जी के सुपुत्र विश्वनाथ जी को दिया।

बलिदान गाथा- १९२३ में मुसलमानों ने '१९ वीं सदी का महर्षि' नामक एक पुस्तक प्रकाशित की जिसमें महर्षि दयानन्द का बहुत ही अपमानजनक चित्रण था तथा भगवान् श्रीकृष्ण जी के सम्बन्ध में 'कृष्ण तेरी गीता जलानी पड़ेगी' में बहुत अपमानजनक शब्दों का प्रयोग किया। इन घिनौनी पुस्तकों का उत्तर 'रंगीला रसूल' नामक पुस्तक प्रकाशित कर दिया गया। पुस्तक बिकती रही कोई शोर नहीं मचा, परन्तु महात्मा गाँधी ने अपनी मुस्लिम-परस्त नीति में इस पुस्तक के विरुद्ध एक टिप्पणी लिख दी। फिर कट्टरवादी मुसलमानों और मुल्लाओं ने राजपाल जी के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ दिया। अभियोग ४ वर्ष तक चला। राजपाल जी को छोटे न्यायालय ने डेढ़ वर्ष का कारावास तथा एक हजार रुपये का जुर्माना किया, परन्तु सेशन कोर्ट और बाद में हाईकोर्ट के माननीय न्यायाधीश कंवल दलीप सिंह ने महाशय राजपाल को ससम्मान दोषमुक्त कर दिया।

पहला प्रहार- मुसलमान इस निर्णय से भड़क उठे और एक धर्मान्ध मुसलमान खुदाबख़्श नामक पहलवान ने २६ सितम्बर १९२७ को उन पर प्राणघातक हमला किया, परन्तु प्रभु की इच्छा कुछ और थी। स्वामी स्वतन्त्रानन्द तथा स्वामी वेदानन्द जी दैवयोग से वहाँ उपस्थित थे। उन्होंने घातक को दबोच लिया और घातक को ७ वर्ष के कारावास की सजा मिली।

दूसरा प्रहार (स्वामी सत्यानन्द जी पर आक्रमण)- ८ अक्टूबर १९२७ को अब्दुल अजीज नामक धर्मान्ध मुसलमान ने चाकू व उस्तरे से प्राणघातक हमला उनकी दुकान पर किया। हमला राजपाल समझ कर स्वामी सत्यानन्द जी पर कर दिया। वह स्वामी जी को घायल करके भागना ही चाहता था कि पड़ोसी दुकानदार नानकचन्द कपूर ने शौर्य का परिचय देते हुए उसे पकड़ लिया, परन्तु नानक चन्द से छूटकर उसके भाई चुन्नीलाल को घायल करके भाग निकला, परन्तु चौक अनारकली में दबोच लिया गया। उसे १४ वर्ष का कारावास हुआ।

अन्तिम प्रहार- महाशय जी गुरुकुल कांगड़ी के वार्षिकोत्सव से लौटकर ६ अप्रैल १९२९ को दुकान में आराम कर रहे थे तभी एक दुष्ट हत्यारे इल्मदीन ने महाशय राजपाल के सीने में दोधारी छुरा घोंप दिया। वीर राजपाल जी का तत्काल प्राणान्त हो गया। हत्यारा जान बचाने के लिए भागा, परन्तु महाशय विद्यारत्न जी ने हत्यारे को कसकर अपनी भुजाओं में जकड़ लिया और जब तक पुलिस नहीं आ गई तब तक उसे दबोचे रखा। देखते ही देखते महाशय जी की दुकान पर हजारों लोग एकत्र हो गये। देवतास्वरूप भाई परमानन्द वहाँ पहुँच गए। भाई परमानन्द जी ने महाशय राजपाल के बलिदान पर अपनी सम्पादकीय टिप्पणी में ठीक ही लिखा था ''आर्यसमाज के इतिहास में यह अपने ढंग का तीसरा बलिदान है पहला धर्मवीर लेखराम का, दूसरा स्वामी श्रद्धानन्द का और तीसरा बलिदान महाशय राजपाल जी का।''

इल्मदीन पर मुकदमा चला और इसे मियाँवाली जेल में फाँसी मिली। जिसकी लाश खोद कर लाहौर लाई गई और उसका शानदार जुलूस निकाला गया। कोई भी बड़े से बड़ा मुसलमान नहीं होगा जो उसकी अर्थी के साथ न गया हो। कादियानी पत्र 'लाइट' ने लिखा ''प्रत्येक हिन्दू राजपाल है, इसलिए प्रत्येक मुसलमान को इल्मदीन बन जाना चाहिए।''

महाशय जी के मित्र कहा करते थे ''मौत से मत खेलो''। वे कहते, मौत से डरे तो जिन्दगी क्या? इसी मार्ग पर हँसते-हँसते अपनी जान दे दी।

अन्तिम यात्रा- महाशय जी का पोस्टमार्टम तो उसी सायंकाल हो गया था, परन्तु लाहौर के हिन्दुओं ने यह निर्णय लिया कि अगले दिन हुतात्मा की शवयात्रा धूमधाम से निकाली जाये, परन्तु मुसलमान अधिकारियों ने ब्रिटिश अधिकारियों के मन में निराधार भय का भूत बिठा दिया कि इससे शहर में दंगा हो जायेगा। सरकार ने धारा १४४ लगा दी, परन्तु हिन्दू भी अड़े रहे और आठ अप्रैल १९२९ को महाशय राजपाल जी की शवयात्रा धूमधाम से निकली। शवयात्रा में लगभग २५ हजार व्यक्ति शामिल हुए। श्मशान भूमि पहुँचने तक लगभग साढ़े तीन घण्टे लगे। नश्वर देह को चिता में रखकर महात्मा हंसराज जी ने मुखाग्नि दी। उस समय महाशय जी के बड़े पुत्र प्राणनाथ ११ वर्ष के थे। समस्त हिन्दू समाज के प्रतिनिधि के रूप में महात्मा हंसराज जी को यह कार्य सौंपा गया।

प्राण जाएँ पर वचन न जाए- 'रंगीला रसूल' के मूल लेखक पं. चमूपति जी एम.ए. थे जो बाद में गुरुकुल कांगड़ी के आचार्य बने, परन्तु उसमें लेखक का नाम लिखा 'दूध का दूध पानी का पानी'। महाशय राजपाल जी ने यह वचन लेखक को दे दिया था कि इसके लेखक का नाम नहीं बताऊंगा और उसको जीवन भर निभाया। राजपाल पर कई वर्षों तक मुकदमा चला, परन्तु उन्होंने इसकी पूरी जिम्मेदारी अपने ऊपर ली और अंततः पंजाब हाईकोर्ट ने महाशय जी को सभी आरोपों से मुक्त कर दिया। स्वामी ओमानन्द जी 'आर्यसमाज के बलिदान' नामक पुस्तक में लिखते हैं-महाशय राजपाल के शहीद हो जाने के उपरान्त शिमला में मुझे मालवीय जी मिले। उन्होंने मुझसे पूछा- राजपाल ने उस पुस्तक के लेखक का नाम बतलाया या नहीं। मैंने कहा- न अभियोग में, न पहला आक्रमण होने पर। अर्थात् मरण तक किसी को यही नहीं बतलाया कि इस पुस्तक का लेखक कौन है? इस पर मालवीय जी ने कहा- वे बड़े महान् आत्मा थे, जान दे सकते थे, परन्तु किए प्रण को जीवन निभाते रहे।

महाशय जी के बलिदान का प्रभाव- महाशय राजपाल जी ने धर्महित में अपना बलिदान देकर आर्यजाति में एक ऐसे नवजीवन का संचार कर दिया, जिसको कभी भुलाया नहीं जा सकता। इससे पूरे जगत् का सिर गौरव से ऊपर उठ गया है।

महाशय जी का बलिदान हिन्दू मात्र के लिए कितना महत्त्वपूर्ण था, इसका पता इस बात से चलता है कि उनके बलिदान के १० वर्ष बाद तक पंजाब सीमा प्रान्त, जम्मू-कश्मीर, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान व उत्तरप्रदेश में भी सैंकड़ों हिन्दू परिवारों ने अपने नवजात पुत्रों को 'राजपाल' नाम देकर अपने को गौरवान्वित किया।

श्रद्धाञ्जलि
(हुतात्मा राजपाल जी के प्रति)

रचयिता- प्राध्यापक राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

निर्भय होकर वैदिक पथ पर जीवन वारा।
राजपाल, वह आर्य जाति का राजदुलारा।।
शूर, साहसी, सज्जन, त्यागी, देशाभिमानी।
धीर, वीर, वह कर्मवीर सच्चा बलिदानी।।
वेदनिष्ठ, वह ऋषि भक्त, पौरुष का पुतला।
प्रभु-प्रिय, वह धर्मवीर, मन निर्मल उजला।।
कष्ट घनेरे आए, तूने सारे झेले।
धन्य तुम्हारा शौर्य, धन्य तुम नर अलबेले।।
ज्ञान उजाला करके, युग धारा को मोड़ा।
ग्रन्थ प्रकाशित करके, तम के मद को तोड़ा।।
सेवा-धर्म कमाकर के इतिहास बनाया।
फूँक दिया घर-बार तमाशा खूब दिखाया।।
मरकर के हे वीर, अमर पद तूने पाया।
देकर धार लहू की, जाति को गर्माया।।
परहित जीने-मरने का मार्ग दिखलाया।
जीवन-दीप बुझाकर, जीवन-धर्म बताया।।

संन्यासी नियन्ता होता है

सत्योपदेश सब आश्रमी करें और सुनें परन्तु जितना अवकाश निष्पक्षपातता संन्यासी को होती है उतनी गृहस्थों को नहीं। जितना भ्रमण का अवकाश संन्यासी को मिलता है अन्यों को नहीं। जब ब्राह्मण वेद-विरुद्ध आचरण कर तब उनका नियन्ता संन्यासी होता है।

दयानन्द गुरु स्तवन

सुनील 'बुद्धंकुर'

मनहरण कवित्त छंद-

जगत को कारन निवारन भौ बन्धन को।
सब ते अधिक नित्य आकर आनन्द ही।।
वेदन को भाषी काल ते न होत नाशी सर्व-
गुरुन के गुरुन को कोटि कोटि वंद ही।।
सहस अठासी ब्रह्मचारी ब्रह्मवासी अति-
ज्ञानी गुनरासी संत जन अभिनन्द ही।।
ब्रह्मा ते जैमिनी लौं तो सब गुरुदेव मेरे।
कलियुग मांहि मेरो गुरु दयानन्द ही।।

सिंह संन्यासी को विलोकी जन अचरज।
तपित पाखण्डी अति वेद के मिहिर सों।।
बचन सों जाके काशी वृन्दावन कंपि गये।
ऊगो मैल ताहि को जो न्हाये गंग नीर सों।।
सार्दूल समान बलवान, ज्ञानवान अति।
जाकी आन उतरी ना तलवार तीर सों।।
चतुदिग धुनि इक 'सुनील गाजन' लगी।
ऐसो कोउ है जो भट लरे सूरवीर सों।।

वेद को उजास करि। तिमिर को नाश करि।
खल बल ह्रास करि। कियो जग हित रे।।
आरज ते प्रीत करि। धरम की जीत करि।
पाखण्ड को वैरी जिमि। मिरग को चित रे।।
गगन ते फुल्ल झरै। संत प्रकुल्ल खरे।
सबै सुरगन मिलि। गाई तोरे गित रे।।
'सुनिल' कहत प्यारे। पचि गए अंग सारे।
तेरे दयानन्द गुन। गाऔं कित कित रे।।

शब्दार्थ- भौ=भव, वेद को=वेदों का, सहस=सहस्र, मिहिर=सूर्य, गाजन=गर्जन, आरज=आर्य, मिरग=मृग, गित=गीत, पचि गए=थक गए, कित कित= कितना, कहाँ तक।

जे.पी. नगर रोड, सर्वोदय बस्ती, बीकानेर, राज.

पूर्ण प्रभु की पूर्ण कृति

प्रकाश चौधरी

अथर्ववेद में एक मन्त्र आता है-

न किल्बिषमत्र नाधारो अस्ति न यन्मित्रैः सममान एति।
अनूनं पात्रं निहितं न एतत्पक्तारं पक्वः पुनराविशाति।।

१२.३.४८

उस परमपिता परमात्मा के किसी भी कार्य में कोई त्रुटि नहीं है। न उसकी रचना में, न उसके संचालन में। वह न्यायकारी है। उसके न्याय में न पक्षपात है, न अधिक व कम का स्थान है। न ही किसी की सिफारिश या बल चल सकता है। जो जैसा करता है वैसा ही फल पाता है। प्रभु की न्याय-व्यवस्था में किसी प्रकार की घटा-बढ़ी नहीं है। वह ईश्वर स्वयं पूर्ण है तथा उसकी रचना पूर्ण है, परन्तु नास्तिक व्यक्ति परमात्मा की रचना में दोष देखते हैं, त्रुटियाँ निकालते हैं। अज्ञानतावश वे देख ही नहीं सकते कि उसकी व्यवस्था कितनी नियमित है तथा सुचारु रूप से संचालित है। सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थ एवं प्राणी, स्थूल से स्थूल पदार्थ एवं प्राणी, सभी अपने-अपने स्थान पर व्यवस्थित हैं। एक व्यक्ति यात्रा पर निकला, थका था, एक वृक्ष के नीचे विश्राम करने लगा। निद्रा में था। वृक्ष के ऊपर से एक छोटा-सा फल उसके मस्तक पर आ गिरा। चौंक कर उठा। सर में दर्द हुआ, कराहने लगा। फिर सोचा मैं तो परमात्मा की रचना पर हँसा करता था कि देखो उसने कमजोर बेलों पर तो तरबूज जैसे फल लगा दिए हैं और इतने मजबूत तथा बड़े-बड़े वृक्षों पर नन्हे से फल। मैं ही मूर्ख था। यदि वह इस पेड़ पर तरबूज लगा देता तो मैं आज जीवित ही न होता, मेरा सिर फट जाता। वाह! रे भगवान् तेरी हर कृति त्रुटिहीन है।

प्राचीन समय से ही नास्तिक उसकी व्यवस्था में आक्षेप लगाते रहे हैं। ऐसे कुछ आक्षेपों को महाराज भर्तृहरि जी ने अपने शतक में दर्शाया भी है-

गन्धः सुवर्णे फलमिक्षुदण्डे,
नाकारि पुष्पं खलु चन्दनस्य।
विद्वान् धनाढ्यश्च नृपश्चिरायुः,
धातुः पुरा कोऽपि न बुद्धिदोऽभूत।।

१. नास्तिकों का आक्षेप है कि परमात्मा ने कुछ वस्तुओं की रचना में बुद्धि का प्रयोग नहीं किया जैसे- सोने जैसी मूल्यवान् वस्तु में कोई सुगन्धि नहीं दी। कोई उत्तम कार्य करें तो कहा जाता है कि सोने में सुगन्धि हो गयी। विश्लेषणकर्त्ता के अनुसार यदि सोने में सुगन्ध हो जाती तो उसका मूल्य बढ़ जाता। यदि इस पर बुद्धिपूर्वक विचार करें तो पता चलेगा कि यदि प्रभु सोने में सुगन्धि डाल देते तो क्या होता? सोने को तपा कर (अग्नि में) उसे शुद्ध किया जाता है। उसके खरे-खोटेपन को अग्नि में डालकर ही परखा जाता है। अग्नि तो हर दुर्गन्ध एवं सुगन्ध को भी नष्ट करती है। अर्थात् सोने की सुगन्ध भी जाती रहती और मूल्य कम हो जाता। कुन्दन बनने से रह जाता। यह परमात्मा की बुद्धिमत्ता का प्रमाण है। वैसे भी इस मूल्यवान् धातु को चोर, डाकू उसकी गन्ध पाकर सरलता से लूट लेते। सोना रखने वालों का जीवन संकट से घिरा रहता, अतः सोने में सुगन्धि का न होना हर दृष्टि से उचित है।

२. नास्तिकों का दूसरा आक्षेप है कि ईश्वर ने ईख पर फल नहीं लगाया, नहीं तो उसका फल भी गुड़ की तरह मीठा होता। यहाँ भी परमात्मा की असीम बुद्धिमत्ता झलकती है। कृषक को ईख उत्पन्न करने के लिए अत्यन्त परिश्रम करना पड़ता है। जब तक गन्ना पक नहीं जाता उसे अनेकों बार गुड़ाई तथा सिंचाई करनी पड़ती है। उसके उपरान्त उसे क्रशर में डालकर उसके रस से गुड़ आदि अनेकों पदार्थ बनाये जाते हैं। यदि फल भी मीठा होता तो अनेकों प्रकार के कीट तथा पक्षी उसकी मिठास का आनन्द लेते और कृषक मुसीबत में फँसा रहता। किसी को भी गुड़, चीनी, शक्कर, शीरा एवं सिरका आदि उपलब्ध नहीं होते। गन्ने को सुरक्षित रखना कठिन होता। इस प्रकार ईख पर फल न लगाना ही उचित है।

३. उनका **तीसरा आक्षेप है** सुगन्धित चन्दन के वृक्ष पर फूल ही नहीं लगाए। यदि फूल होते तो सुगन्धि अधिक मिलती। वातावरण सुगन्धित होता। यह आक्षेप भी निराधार

है। विश्लेषण के अनुसार प्रकृति का एक नियम देखने को मिलता है कि जिस पौधे अथवा पेड़ पर सुगन्धित फूल लगता है उसकी लकड़ी में कोई विशेषता एवं गुण नहीं होता। इसके विपरीत जिनकी लकड़ी में सुगन्ध अथवा गुण होते हैं उनमें फूल नहीं लगते। गुलाब, चंपा, चमेली, नर्गिस, मोतिया आदि सभी सुगन्धित पुष्प वाले पौधों की लकड़ी यानि तने व पत्तों की कोई विशेषता नहीं होती, न ही पुष्पों में स्थायित्व होता है। चन्दन, यूक्लैप्टिस, तुलसी आदि वृक्षों पर यद्यपि पुष्प नहीं लगते परन्तु इनकी सुगन्ध चिरकाल तक रहती है। इनके पत्ते व तने मनुष्य के लिए अत्यन्त उपयोगी होते है। फूल केवल कुछ दिन सुगन्धि देता, परन्तु चन्दन की लकड़ी अनेकों कार्यों में प्रयुक्त की जाती है और वह भी अनेकों वर्षों तक।

४. चौथा आक्षेप है विद्वान् को धन देना चाहिए था। विद्वानों को परमात्मा ने धन नहीं दिया जो सत्य भी है। प्राय: विद्वान् निर्धन ही मिलते हैं। नास्तिकों के अनुसार यदि किसी विद्वान् के पास धन होता तो संसार का अधिक उपकार कर सकता। अक्सर देखने को आता है कि अयोग्य व्यक्तियों के पास धन अधिक होता है। वे धन का सही उपयोग नहीं करते और योग्य व्यक्ति तथा विद्वान् अर्थ-संकट में रहते हैं, परन्तु यदि इस पर विचार किया जो तो उसमें भी परमात्मा द्वारा किया गया एक प्रकार से हित ही है। धन का अभाव ही है जिस कारण संसार में विद्या का प्रकाश हुआ है। यदि विद्वान् धन के चक्कर में फँस गया तो वह सत्य मार्ग पर नहीं चल सकता। सच्चाई कहने का साहस भी नहीं कर सकता। वह अपने लिए स्वार्थी बन सकता है। स्वामी दयानन्द के समय के अनेक विद्वान् बालशास्त्री, स्वामी विशुद्धानन्द आदि जानते हुए भी कि स्वामी जी का हर कथन सत्य है लेकिन अपने स्वार्थवश कहने का साहस नहीं कर सके। सामना करने का साहस वही कर सकता है जो धन को तिनके के तुल्य समझता है। स्वामी दयानन्द ही हुए जिन्होंने अपने सत्य भाषण एवं सत्य के प्रचार के लिए उदयपुर के महाराणा के द्वारा एकलिङ्ग गद्दी देने के लालच को ठुकरा दिया। ईश्वर की आज्ञा-पालन ही उनके लिए सब कुछ था। ज्ञान का प्रकाश वही कर सकता है जो काम, भय, लोभ से दूर रह कर धर्म को अपना मित्र समझता है। संसार में विद्या का प्रकाश ऐसे ही तपस्वी महात्माओं ने किया है, जिनके पास सदा धन का अभाव रहा। वैशेषिक दर्शन के रचयिता महर्षि कणाद की ऐसी ही तपस्या एक उदाहरण है जिन्होंने गेहूं की बालियों से गिरे कणों को चुनकर अपनी भूख मिटाई और संसार को 'वैशेषिक दर्शन' के रूप में महान् विज्ञानमय शास्त्र दिया।

५. नास्तिकों का पाँचवा आक्षेप है- राजा को लम्बी आयु वाला बनाना चाहिए था ताकि वह प्रजा की सेवा लम्बे समय तक करता। अज्ञानवश वे नहीं जानते कि आयु, भोग, जाति हर मानव को अथवा जीव को अपने कर्मों के अनुसार मिलती है। वास्तव में यदि किसी भी व्यक्ति को या राजा को सैकड़ों, हजारों वर्षों की आयु दे दी जाये तो वह यही सोचेगा कि अभी तो बहुत लम्बी आयु पड़ी है धर्म या भक्ति के लिए। अभी तो ऐश्वर्य का जीवन भोग लेते हैं, तो वह अधर्म एवं उलटे कार्यों के प्रति ही प्रवृत्त होगा। संसार में मानव की वृत्ति में यही बात झलकती है। व्यक्ति जानता है कि मृत्यु किसी भी अवस्था में आ सकती है। चाहे बचपन हो या किशोरावस्था या फिर यौवन। फिर भी व्यक्ति धर्म के कार्य करने हेतु या ईश्वर का भजन करने के लिए वृद्धावस्था की प्रतीक्षा करता रहता है। वह सोचता है अभी तो मौज-मस्ती की अवस्था है। इसी प्रकार एक दीर्घजीवी राजा भी निरंकुश हो सकता है। इसीलिए उस न्यायकारी परमात्मा ने राजा को अलग से दीर्घ आयु नहीं दी।

मन्त्र में कहा गया-''**अत्र किल्बिषं न**'' अर्थात् उसके न्याय में कहीं कोई त्रुटि नहीं है। वह तो सर्वज्ञ है, शक्तिमान् है, अति ऐश्वर्यशाली है। उसको किसी पीर, पैगम्बर अथवा गुरु की सिफारिश की आवश्यकता नहीं। सांसारिक न्यायाधीश को तो कोई अभाव हो सकता है। चाहे धन का हो या ज्ञान में न्यूनता हो या फिर शक्तिमान् व्यक्तियों का दबाव हो। वह अपने न्याय-कर्म को परिस्थितिवश बदल सकता है, परन्तु परमात्मा की न्याय-व्यवस्था में इन सब प्रयत्नों का कोई स्थान नहीं। ''**अनूनं पात्रं निहितं न एतत्**'' सबके कर्मों का सही लेखा-जोखा उसके पास है, जिसके अनुसार न्याय होता है और अच्छा या बुरा फल व्यक्ति को

मिलता है। मन्त्र में कहा कि व्यक्ति जो पकाता है वही उसे भोगने को मिलता है।

वैदिक धर्म का आधार-''कर्म सिद्धान्त'' यह वेद की अपनी विशेषता है। यह विशेषता किसी भी दूसरे धर्म में, न ही पौराणिकों में है। दूसरे मतों के अनुसार एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के पाप कर्मों को अपने ऊपर ले सकता है जैसे ईसाई मत में यीशुमसीह, इस्लाम में मुहम्मद साहिब आदि सबके दुष्कर्मों का बचाव कर लेते हैं। कलमा पढ़ा और जन्नत मिली। पौराणिकों में भी गंगा-स्नान से या किसी पंडित द्वारा पाठ करवाया तो सभी बाधाएँ या दुष्कर्म दूर हो जाते हैं। वास्तव में ऐसे विचार समाज में दूषित वातावरण पैदा करते हैं। ऐसे तो हर व्यक्ति पाप करता रहेगा जिसको यह विश्वास है कि उसके पाप का अन्त करने वाला कोई दूसरा व्यक्ति है या कोई साधन है। वेद कहता है कि लौकिक व पारलौकिक सुखों का आधार 'कर्म सिद्धान्त' है। यह सुख-दुःख, मुक्ति सब कर्म के फल हैं। इसलिए हमें उस प्रभु की न्याय-व्यवस्था को समझना चाहिए और अपने आचरण में धर्म-कर्म को स्थान देना चाहिए। यदि ऐसा विश्वास हो जाये तो वेदानुसार व्यक्ति को तीन लाभ होंगे।

पहला लाभ होगा कि किसी भी कष्ट के आने पर व्यक्ति भयभीत नहीं होगा, घबराएगा नहीं क्योंकि वह जानता है कि उसके अपने दुष्कर्मों का फल है। उसे यह भोगना ही है। इस प्रकार उसमें साहस व धैर्य उत्पन्न होगा। उसको बड़ा दुःख भी छोटा अनुभव होगा।

दूसरा लाभ होगा कि उसे सुख-दुःख समान लगेंगे। उसमें ऐसी दृढ़ता आएगी कि स्वयं परमात्मा से प्रार्थना करेगा कि हे ईश्वर! मुझसे अज्ञानतावश जो भी अपराध हुआ हो उसका फल तुझसे माँगता हूँ ताकि मैं फल भोगकर अपने पाप-बोझ से उतर जाऊँ और शान्ति पाऊँ। जहाँ व्यक्ति सुख की प्रार्थना करता है, वहाँ शान्ति पाने के लिए, अपने किये पापों का छुटकारा पाने के लिए भी वह प्रार्थना करेगा। अथर्ववेद में एक सुन्दर मन्त्र आता है जिसमें भक्त प्रार्थना करता है कि ''हे आपत्ति! मैं तेरा आदर करता हूँ। मैंने अपनी भूलों से फौलादी बेड़ियाँ डाल ली हैं, तू अपना तेज प्रहार करके मुझे मुक्त कर। मैं तेरे इस संहारक रूप को भी नमस्कार करता हूँ।'' कर्म सिद्धान्त का तीसरा लाभ होगा कि व्यक्ति पाप-कर्म एवं दुष्ट-कर्म करने का परित्याग करेगा। उसमें दिव्य गुणों का वास होगा। सुख पाने हेतु व्यक्ति हर प्रकार का अच्छा या बुरा कर्म करता है। कहीं धन की लालसा, भोगों का आनन्द या फिर झूठे यश को पाने के लिए छल-कपट, झूठ का सहारा लेता है। यदि यह ज्ञान हो जाये कि पाप का फल दुःख है और धर्म आचरण का फल सुख है तो वह पाप-कर्म का त्याग करेगा। कितने उदाहरण मिलते हैं कि मस्तिष्क में इस विचार के आते ही अनेक लुटेरे डाकू तथा बुरे व्यसनों में लिप्त व्यक्तियों ने अपने जीवन में सुधार किया। वास्तव में शान्त और सुखी जीवन बिताने के लिए मनुष्य को शुभ कर्म करने चाहिएँ और विश्वास रखना चाहिए कि उस प्रभु की किसी भी रचना में या न्याय-व्यवस्था में कोई त्रुटि या दोष नहीं है। **मनुष्य जैसा कर्म करता है वैसा ही फल पाता है।**

माता का कर्त्तव्य

बालकों को माता सदा उत्तम शिक्षा करें, जिससे सन्तान सभ्य हों और किसी अंग से कुचेष्टा न करने पावें। जब बोलने लगें तब उसकी माता बालक की जिह्वा जिस प्रकार कोमल होकर स्पष्ट उच्चारण कर सके वैसा उपाय करें कि जो जिस वर्ण का स्थान प्रयत्न अर्थात् जैसे 'प' इसका ओष्ठ स्थान और स्पष्ट प्रयत्न दोनों ओष्ठों को मिलाकर बोलना, ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत अक्षरों को ठीक-ठीक बोल सकना। मधुर, गम्भीर, सुन्दर, स्वर, अक्षर, मात्रा, पद वाक्य, संहिता, अवसान भिन्न-भिन्न श्रवण होवे। जब वह कुछ-कुछ बोलने ओर समझने लगे तब सुन्दर वाणी और बड़े छोटे, मान्य, पिता, माता, राजा, विद्वान् आदि से भाषण उनसे वर्त्तमान और उनके पास बैठने आदि की शिक्षा करें, जिससे कहीं उनका अयोग्य व्यवहार न होके सर्वत्र प्रतिष्ठा हुआ करे। जैसे सन्तान जितेन्द्रिय, विद्याप्रिय और सत्संग में रुचि करे वैसे प्रयत्न करते रहें। व्यर्थ क्रीड़ा, रोदन, हास्य, लड़ाई, हर्ष, शोक, किसी पदार्थ में लोलुपता, ईर्ष्या, द्वेषादि न करें। उपस्थेन्द्रिय के स्पर्श और मर्दन से वीर्य की क्षीणता, नपुंसकता होती और हस्त में दुर्गन्ध भी होता है, इससे उसका स्पर्श न करें। (स. प्र. द्वि. स.)

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

१. कुल्लियाते आर्य मुसाफिर (पं. लेखराम ग्रन्थ संग्रह)-प्रथम खण्ड

लेखक- पण्डित लेखराम

सम्पादक- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर, पंजाब

मूल्य- रुपये ४५०/- **पृष्ठ**- ४०८

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अवैदिक मान्यताओं के खण्डन एवं वैदिक विचारधारा की प्रतिष्ठा के लिये लेखन और उपदेश दोनों ही विधाओं का भरपूर उपयोग किया। उनके बलिदान के पश्चात् उनके जिन शिष्यों ने इस कार्य को गति दी, उनमें पण्डित लेखराम का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। पण्डित जी की उपस्थिति का आभास मात्र ही विरोधियों के अन्तस् को कँपाने के लिये पर्याप्त होता था। उस मनीषी के मौखिक उपदेश तो संग्रहित नहीं हो पाये, परन्तु उनकी धारदार लेखनी से निकले वाक्य हमारे पास आज भी विद्यमान हैं, जिन्हें ''कुल्लियाते आर्यमुसाफिर'' के नाम से जाना जाता है। परोपकारिणी सभा द्वारा इसका यह प्रथम खण्ड प्रकाशित किया गया है। दूसरा प्रकाशनाधीन है। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जो कि कई भाषाओं के ज्ञाता हैं, उन्होंने इसका कुशल सम्पादन किया है।

२. अष्टाध्यायी भाष्य- भाग २

भाष्यकार- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- २५० रुपये **पृष्ठ**- ४१४

स्वामी दयानन्द सरस्वती ने वैदिक सिद्धान्तों, कर्मकाण्ड, वेदभाष्य आदि के साथ-साथ संस्कृत व्याकरण पर भी पर्याप्त साहित्य का निर्माण किया है। १४ खण्डों में प्रकाशित वेदांग-प्रकाश के साथ-साथ अष्टाध्यायी ग्रन्थ के चार अध्यायों तक का भाष्य भी किया। यह भाष्य तीन खण्डों में परोपकारिणी सभा द्वारा प्रकाशित किया गया, परन्तु इसका द्वितीय भाग समाप्त होने से यह अपूर्ण हो गया था। अब इसका दूसरा भाग भी छप चुका है, जिससे यह सम्पूर्ण रूप में व्याकरण के अध्येताओं को सुलभ हो गया है।

३. संस्कृत वाक्य प्रबोध

लेखक- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- ५०रुपये **पृष्ठ**- ११६

स्वामी दयानन्द सरस्वती संस्कृत को व्यावहारिक भाषा बनाना चाहते थे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने यह 'संस्कृत वाक्य प्रबोध' नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में दैनिकचर्या में प्राय: प्रयोग होने वाले वाक्यों का संकलन है। ये वाक्य ५२ अलग-अलग प्रकरणों में विभाजित हैं, यथा-गुरुशिष्य वार्तालाप प्रकरण, गृहाश्रम प्रकरण, नामनिवास-स्थान प्रकरण आदि। घर में बच्चों को संस्कृत सम्भाषण का ज्ञान कराने के लिये यह पुस्तक महर्षि द्वारा प्रदत्त उपहार है। छपाई एवं आवरण सौन्दर्य की दृष्टि से भी पुस्तक अत्यन्त आकर्षक है।

४. शङ्का-समाधान

लेखक- डॉ. वेदपाल (प्रधान, परोपकारिणी सभा)

मूल्य- ७०/- रुपये **पृष्ठ**- १४०

परोपकारी पत्रिका कई वर्षों से निरन्तर शङ्का-समाधान की परम्परा चलाये हुए है, जिसके कि आर्यजगत् में बहुत ही सार्थक परिणाम हुए हैं। धर्म, दर्शन, सिद्धान्त, व्याकरण आदि विषयों पर आये प्रश्नों के सभी समाधान परोपकारी के अलग-अलग अंकों में होने कारण पाठकों को एक साथ उपलब्ध नहीं हो पाते थे। इन सबकी उपयोगिता एवं पाठकों की माँग को देखते हुए इन सबको पुस्तक का रूप दिया गया है। समाधानकर्ता डॉ. वेदपाल आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् हैं, उनके शास्त्रीय ज्ञान से भरी यह पुस्तक सभा की ओर से स्वाध्यायशील आर्यों को सादर समर्पित है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर। दूरभाष - 0145-2460120**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

शङ्का समाधान - ४५

डॉ. वेदपाल

शङ्का- क्या वेद में राजा-महाराजा, ऋषि-मुनि, नदी, पर्वत, स्थान का नाम तथा पृथिवी की भौगोलिक स्थिति का वर्णन है?

-मुकुटबिहारी, जयपुर

समाधान- वेद के सम्बन्ध में यह सर्वमान्य है कि वेद विश्व साहित्य के प्राचीनतम ग्रन्थ हैं, किन्तु वेद के प्रतिपाद्य के सन्दर्भ में विद्वत्समुदाय का ऐकमत्य नहीं है। जहाँ भारतीय परम्परा वेद को नित्य ईश्वरीय ज्ञान स्वीकार करती है, वहीं पाश्चात्य तथा तदनुगामी भारतीय विद्वान् वेद को ईश्वरीय ज्ञान न मानकर ऋषियों की रचना मानते हैं। इसलिए आधुनिक परम्परा के पोषक वेद में अनेक ऐतिहासिक तथा भौगोलिक घटनाओं के सन्दर्भ देखते हैं। आधुनिक दृष्टि के अनुसार संक्षेप में कहें तो वेद में इतिहास के संकेत उपलब्ध हैं, जिनमें सुदास, देवापि-शन्तनु प्रभृति राजा, गंगा, यमुना, सरस्वती, सिन्धु आदि नदियाँ तथा विश्वामित्र, कण्व, वसिष्ठ, अगस्त्य प्रभृति ऋषियों का नामोल्लेखपूर्वक वर्णन है। **किन्तु महर्षि दयानन्द वेद नित्यत्व के समर्थक हैं। महर्षि के अनुसार सुदास आदि व्यक्तिवाचक संज्ञाएं नहीं हैं।**

आपकी शङ्का इतिहास पक्ष से सम्बद्ध है। प्रथम महर्षि का अभिमत प्रस्तुत है-''वेद मन्त्रभाग और ब्राह्मण व्याख्या भाग है।...क्योंकि ब्राह्मण पुस्तकों में बहुत से ऋषि-महर्षि और राजादि के इतिहास लिखे हैं और इतिहास जिसका हो, उसके जन्म के पश्चात् लिखा जाता है, वह ग्रन्थ भी उसके जन्म के पश्चात् होता है। **वेदों में किसी का इतिहास नहीं, किन्तु जिस-जिस शब्द से विद्या का बोध होवे, उस-उस शब्द का प्रयोग किया है। किसी विशेष मनुष्य की संज्ञा वा विशेष कथा का प्रसंग वेदों में नहीं।**'' द्रष्टव्य-सत्यार्थप्रकाश, समु. ७, पृ. १३५

इतिहास शब्द का अर्थ है-इति+ह+आस-इस प्रकार का व्यक्ति/स्थान/पदार्थ/वस्तु आदि निश्चयपूर्वक था। वेद के सन्दर्भ में इतिहास पद की सार्थक एवं सटीक व्याख्या आचार्य दुर्ग की है-''**इतिवृत्तं परकृत्यर्थवादरूपेण। यः कश्चिदाध्यात्मिक आधिदैविक आधिभौतिको वार्थ आख्यायते दिष्ट्युदितावभासनार्थः स इतिहास इत्युच्यते।**'' द्र. निरुक्त १०.२५ दुर्ग टीका

काल के प्रवाह से वेदाध्ययन की परम्परा लुप्तप्रायः हो गई। महाभारतकाल से पूर्व के वेदभाष्य उपलब्ध नहीं हैं। पण्डित भगवद्दत्त के मतानुसार ब्राह्मण ग्रन्थों का संकलन काल (पं. भगवद्दत्त इसे रचनाकाल न कहकर संकलन काल कहते हैं।) भी महाभारत से कुछ पूर्व से प्रारम्भ होकर कुछ काल पश्चात् तक है। वेदार्थ परम्परा के अभाव में वैदिक पदों के गूढ़ार्थ साधारण अध्येता तो दूर भाष्यकारों तक के लिए दुरूह हो गए। यह मध्यकालीन भाष्यकारों के भाष्य में स्पष्ट दिखाई देता है। आचार्य यास्क वेदार्थ की स्पष्ट परम्परा का प्रतिनिधित्व करते हैं। वेद के इस प्रकार के पदों को समझने के लिए निघण्टु तथा यास्कीय निर्वचन सर्वाधिक सहायक हैं। तद्यथा- **विश्वामित्र**- यास्क ने **'विश्वामित्रः सर्वमित्रः'** निरुक्त २.२४ सभी का मित्र, सभी जिसके मित्र हैं, वह विश्वामित्र है। स्कन्द स्वामी ने आधिदैविक व्याख्या करते हुए- **'आधिदैविक दृष्ट्या- आदित्यः सर्वमित्रः'**- आदित्य सूर्य सब का मित्र है। इस प्रकार निर्वचन किया है। इसी प्रकार **सुदास**- **'सुदाः कल्याणदानः'**-निरुक्त २.२४

इसी प्रकार इन्द्र-वृत्र के युद्ध का प्रसंग है। यास्क का कथन है- ''**तत्को वृत्रः? मेघ इति नैरुक्ताः। त्वाष्ट्रोऽसुर इत्यैतिहासिकाः। अपां च ज्योतिषश्च मिश्रीभावकर्मणो वर्षकर्म जायते। तत्रोपमार्थेन युद्धवर्णा भवन्ति।**''- निरुक्त २.१६

यास्क ने इसे आलंकारिक वर्णन कहा है। ऐतिहासिक पक्ष में निर्वचन की न तो आवश्यकता है और न ही उपयोगिता। **देवापि-शन्तनु**- ऋग्वेद १०.९८.५ में 'देवापि' पद पठित है। इसके साथ शन्तनु का सम्बन्ध स्थापित कर कथा कल्पित कर ली गई है। यास्क ने देवापि का निर्वचन किया है- **'देवापिर्देवानामाप्त्या स्तुत्या च प्रदानेन च।'**-

निरुक्त २.११ अर्थात् देवों की प्राप्ति, स्तुति तथा हवि: प्रदान के कारण 'देवापि' है। यास्क ने देव+आपि: दो पद मानकर निर्वचन किया है। मैक्समूलर सम्पादित ऋग्वेद के पदपाठ में 'देव' तथा 'आपि' दो पद पृथक्-पृथक् हैं। **आधिदैविक दृष्टि से देवापि विद्युत् है।**

ऐतिहासिकों द्वारा गंगा आदि नदी नाम तथा अन्य ऐतिहासिक वर्णन तत्तत् पद को रूढ़ मानकर अर्थ किए जाने के कारण हैं। वेद में उक्त तथा उक्त सदृश पद यौगिक हैं। अत: यह रूढ़ नहीं हैं।

देश के एक प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय के एक कॉलेज के पुस्तकाध्यक्ष ने अपने शोध प्रबन्ध में **भारत चीन की सीमा का वर्णन भी वेद मन्त्र में खोज निकाला है।** इस प्रकार के वर्णन पूर्णत: काल्पनिक तथा परम्परा द्वारा अमान्य हैं। वेद में इस प्रकार के भौगोलिक वर्णन मनोविलास मात्र हैं।

सृष्टि के आदि में ईश्वर वेदविद्या देता है

मनुष्य लोग क्रमश: ज्ञान बढ़ाते जाकर पश्चात् पुस्तक भी बना लें-सो ऐसा कभी नहीं हो सकता है (१) जैसे जंगली मनुष्य सृष्टि को देखकर भी विद्वान् नहीं होते और जब उनको कोई शिक्षक मिल जाय तो विद्वान् हो जाते हैं और अब भी किसी से पढ़ेबिना कोई भीविद्वान् नहीं होता। इस प्रकार जो परमात्मा उन आदि सृष्टि केऋषियों को वेदविद्या न पढ़ाता और वे अन्य को न पढ़ाते तो सब लोग अविद्वान् ही रह जाते। (२) जैसे किसी के बालक को जन्म से एकान्त देश, अविद्वानों वा पशुओं के सग में रख दें तो वह जैसा संग है वैसा ही हो जायगा। (३) जब तक आर्यावर्त्त देश से शिक्षा नहीं गई थी तब तक मिश्र, यूनान और यूरोप के कुलुम्बस आदि पुरुष अमेरिका में जब तक नहीं गये थे तब तक वे भी सहस्रों लाखों, करोड़ों वर्ष से मूर्ख अर्थात् विद्याहीन थे। पुन: सुशिक्षा के पाने विद्वान् हो गये

साहित्य के प्रकाशन में अपना सहयोग दें

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर साहित्य प्रकाशन का निरन्तर विस्तार कर रही है। महर्षि द्वारा रचित साहित्य को प्राथमिकता से प्रकाशित किया जा रहा है। इसी क्रम में सभा निम्न पुस्तकों को प्रकाशित कर रही है-

१. **महर्षि दयानन्द सरस्वती के शास्त्रार्थ**- नामक पुस्तक नये कलेवर में, सुन्दर साज-सज्जा के साथ पुन: प्रकाशित की जा रही है। यह ग्रन्थ शीघ्र ही छपकर आर्यजनों के हाथों में होगा। इस ग्रन्थ की लागत लगभग ५१,०००/- (इक्यावन हजार रुपये) आयेगी।

२. आत्मकथा (महर्षि दयानन्द सरस्वती)-यद्यपि यह पुस्तक 'दयानन्द ग्रन्थमाला' में छप चुकी है, परन्तु पृथक् पुस्तक के रूप में भी यह पाठकों को उपलब्ध हो, इसलिये इसका नया संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। इस पुस्तक की छपाई का सम्पूर्ण व्यय लगभग ३१,०००/- (इकत्तीस हजार रुपये) होगा।

३. व्यवहार भानु- महर्षि द्वारा लिखित इस पुस्तक का नया आकर्षक संस्करण प्रकाशित करने का व्यय भी लगभग ३१,०००/-(इकत्तीस हजार रुपये) आयेगा।

४. डॉ. धर्मवीर जी के सम्पादकीय-परोपकारिणी सभा के पूर्व प्रधान व परोपकारी पत्रिका के प्राणभूत सम्पादक स्मृतिशेष डॉ. धर्मवीर जी की ज्ञानप्रसूता लेखनी से लिखे गये सम्पादकीय लेख समाज की धरोहर हैं। उन्हें भी सभा अलग-अलग पुस्तकों में विषयानुसार विभाजित करके छाप रही है। जिसमें 'भाषा और शिक्षा' पर लिखे सम्पादकीय 'अंग्रेज जीत रहा है' नामक पुस्तक में छप चुके हैं। इसी क्रम में आर्यसमाज, महर्षि दयानन्द एवं वैदिक सिद्धान्तों पर लिखे गये सम्पादकीयों का संकलन भी प्रकाशित किया जा रहा है। इस पुस्तक का व्यय लगभग ७०,०००/-(सत्तर हजार रुपये) होगा।

जो सज्जन इन पुस्तकों का सम्पूर्ण व्यय देकर अपनी ओर से प्रकाशित कराना चाहें, उनका परिचय चित्र सहित पुस्तक में दिया जायेगा। इस कार्य में मुक्त हस्त से सभा को सहयोग करें। - **मन्त्री**

ऐतिहासिक कलम से....

वेदों की दार्शनिक विचारधारा

आचार्य जगदीशचन्द्र शास्त्री

संसार के विद्वानों में निरन्तर यह चर्चा का विषय रहा है कि क्या वेद और दर्शनों में एकरूपता है? क्या दोनों का प्रतिपाद्य एक ही है या भिन्न? इन प्रश्नों का उत्तर पाठक प्रस्तुत लेख में पा सकेंगे।

सत्य की खोज जीवन की प्रेरणा रही है और इसी खोज का परिणाम है षड्दर्शन। दर्शन-द्वारा विवेक प्राप्त कर 'वेद' का रहस्य हम सुगमता से हृदयगंम कर सकते हैं।- सम्पादक

अन्ति सन्तं न जहाति अन्ति सन्तं न पश्यति।
देवस्य पश्य काव्यं न ममार न जीर्यति।।

अथर्व. १०. ८. ३२

शब्दार्थ- (**अन्ति-सन्तम्**) बहुत सूक्ष्म्= निराकार होने पर भी (**न जहाति**) **वह भगवान् किसी का परित्याग नहीं करता।** (**अन्ति-सन्तम्**) बहुत समीप होने पर भी कोई उस भगवान् को (**न पश्यति**) नहीं देखता है। हे मनुष्य! (**देवस्य**) उस महिमामय देव के (**काव्यम्**) काव्य को= **दृश्य काव्य**= इस संसार को और श्रव्य काव्य= वेद को, (पश्य) देख, पढ़, विचार जो कि (न ममार) कभी भी नहीं मरता और (न जीर्यति) न ही कभी पुराना होता है।

भावार्थ- यद्यपि वह परमात्मा निराकार है, परन्तु फिर भी वह किसी का परित्याग नहीं करता। यद्यपि वह परमात्मा बहुत समीप है, परन्तु फिर भी कोई उसको देख नहीं सकता। हे मनुष्यो! उस परमात्मा की रचना, इस संसार को देखो और उसके प्रदान किये हुए ज्ञान के भंडार वेद को देखो, जो न तो कभी मरता है और न कभी जीर्ण होता है।

वेद का स्वाध्याय करने वाले प्रत्येक स्वाध्यायशील सज्जन को यह तो अवश्यमेव स्वीकार करना ही पड़ता है कि संसार के पुस्तकालय में वेद ही एकमात्र ऐसी पुस्तक है जो अत्यन्त प्राचीन और आकर्षक होने के साथ-साथ संसार की प्राय: सभी समस्याओं का समुचित समाधान उपस्थित करती है, यही कारण है कि मनु जैसे धर्मज्ञ से लेकर जैमिनि जैसे मीमांसक तक तथा आधुनिक विदेशीय और भारतीय विद्वानों तक सभी विचारशील सज्जन वेद के प्रति अपनी अगाध श्रद्धा का समय-समय पर प्रकाश करते चले आ रहे हैं।

वेद के ईश्वरीय ज्ञान होने का यह भी एक प्रबल प्रमाण है कि जैसे अनेक प्रकार के विज्ञानों के लिये सूर्य, पृथ्वी और नक्षत्रों की ओर आशा-भरी दृष्टि से देखा जाता है वैसे ही अनेक प्रकार के विज्ञानों के लिये वेद की ओर भी देखा जाता है और आश्चर्य तो यह है जैसे सूर्य, पृथ्वी आदि का गम्भीर अध्ययन करने से अनेक प्रकार के लोकोपकारी तत्वों का विज्ञान-लाभ होता जा रहा है वैसे ही वेद मन्त्रों का गम्भीर मनन करने से अनेक प्रकार के लोकोपकारी तत्त्वों का भी विज्ञान लाभ होता जा रहा है।

तत्तद्विषय के ज्ञानवान् विद्वानों का कथन है कि वेद में यत्र-तत्र सामाजिक, भौतिक, नैतिक तथा व्यावहारिक, राष्ट्रीय और चिकित्सा-सम्बन्धी अनेक विषयों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। विज्ञान और दर्शन से सम्बन्ध रखने वाले तत्त्वदर्शी विद्वानों का भी निश्चित मत है कि वेद में संसार और दर्शन शास्त्र के अनेकानेक रहस्यों का यत्र-तत्र उद्घाटन किया गया है, न केवल यह ही अपितु वैदिक ऋषियों का तो यहाँ तक कहना है कि वेद के प्रत्येक मन्त्र में किसी न किसी प्रकार से ब्रह्म तथा अध्यात्म विद्या का ही वर्णन है तथा उपनिषद् में ऋषि ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि-

''**सर्वे वेदा: यत् पदमामनन्ति**'' अर्थात् सारे वेद जिस परब्रह्म के अध्यात्म पद का स्थान-स्थान पर और अनेक प्रकार से बार-बार व्याख्यान करते हैं। विवेकशील विद्वान् तो यहाँ तक कहते हैं कि संसार में यदि संजीवनी शक्ति सूर्य से आई है तो संसार में मानवी सभ्यता वेद से आई है, इसीलिए महर्षि मनुजी का यह कथन सर्वथा सत्य ही सिद्ध होता है कि- **वेदोऽखिलो धर्ममूलम्**। यह मानी

हुई बात है कि धर्म का ईश्वर, जीव और जगत् के साथ सीधा सम्बन्ध है और यही कारण है कि वेद में इन तीनों तत्त्वों का स्थान-स्थान पर वर्णन पाया जाता है। इन तीनों तत्त्वों का परस्पर इतना अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध है कि एक की सत्ता को स्वीकार करने से दूसरे की सत्ता को और दूसरे की सत्ता को स्वीकार करने से तीसरे की सत्ता को स्वीकार करना अनिवार्य हो जाता है। इस त्रैतवाद के मौलिक सिद्धान्त का वेद ने कई स्थानों पर बड़े अच्छे ढंग से वर्णन किया है, यथा-

अस्य वामस्य पलितस्य होतुस्तस्य भ्राता मध्यमो अस्त्यश्नः।
तृतीयो भ्राता घृतपृष्ठो अस्यात्रापश्यं विश्पतिं सप्तपुत्रम्।।

ऋ. १.१६४.१

मन्त्र ने पहली महत्त्वपूर्ण बात यह कही है कि इस जगत् का कोई स्वामी अवश्य है। वह परब्रह्म परमेश्वर ही सम्पूर्ण जगत् का एकमात्र संरक्षक और कर्मफल प्रदाता है, उसके आनन्द से ही संसार में सर्वत्र आनन्द का साम्राज्य छाया हुआ है। परमेश्वर की सत्ता को यथार्थ और तात्त्विक सत्य सिद्ध करने के लिये मुख्य प्रमाण प्रत्यक्ष का आश्रय लेते हुए '**अस्य**' पद का प्रयोग किया गया है अर्थात् सामीप्यबोधक '**इदम्**' शब्द से निर्भ्रान्त ज्ञान कराया गया है। यही कारण है कि ऋषियों ने '**त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि, त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि**' आदि प्रसिद्ध वचनों से परमेश्वर को निकटतम स्वीकार किया है। न केवल इदम् शब्द के द्वारा ही अपितु 'त्वम्' पद के द्वारा भी साक्षात्कार करते हुए वेद में परमेश्वर को अत्यन्त निकटस्थ भी कहा गया है यथा '**त्वं न अन्तम**' अर्थात् हे परमेश्वर! तू हमारे अत्यन्त समीप है।

दूसरी बात मन्त्र में यह कही गई है कि परमेश्वर 'वाम' है-आनन्दस्वरूप है। परमेश्वर के व्यापक आनन्द के कारण ही जगत् में सर्वत्र आनन्द छाया हुआ है। प्रत्येक प्राणी चाहे वह कितनी ही निकृष्ट योनि में क्यों न हो, निरन्तर आनन्द को प्राप्त करने में प्रयत्नशील पाया जाता है। तैत्तिरीय उपनिषद् के ऋषि के शब्दों में कहा जा सकता है कि-'**सह्येवानन्दयति**' वह आनन्दस्वरूप परमेश्वर ही सकल प्राणियों को जीवन का आनन्द प्रदान कर रहा है। '**क एवान्यात् कः प्राण्यात् यदेष आकाश आनन्दो न स्यात्**' कौन प्राणी प्रयत्नशील होता और श्वास तक ले पाता यदि यह व्यापक परमेश्वर आनन्दस्वरूप न होता। ब्रह्मसूत्र प्रणेता महर्षि व्यास के सूत्रानुसार परमेश्वर को आनन्दघन मानना परमावश्यक है-'**आनन्दोमयो ह्यभ्यासात्**' अर्थात् बारम्बार चिन्तन और मनन करने से सिद्ध होता है कि परब्रह्मपरमेश्वर ही आनन्दस्वरूप है तथा उसी के आनन्द को उपलब्ध करने के लिए प्राणिमात्र सतत प्रयत्नशील है।

तीसरी बात है यह है कि संसार का पालन-पोषण करने वाला भी परमेश्वर ही है, यह बात मन्त्र के '**पलितस्य**' पद के द्वारा व्यक्त की गई है।

चौथी बात '**होतुः**' पद के द्वारा कही गई है। परमेश्वर '**होता**' है अर्थात् जीवों के कर्मों का फल प्रदान करने वाला है। इस प्रकार परमेश्वर के विषय में उसके आवश्यक गुणों का नाम निर्देश करने के साथ दूसरे '**आत्म तत्त्व**' का वर्णन किया गया है।

मन्त्र कहता है कि- '**तस्य भ्राता मध्यमः अश्नः अस्ति**' उस परमेश्वर से अतिरिक्त जीवात्मा भी है जो प्रत्येक शरीर में पृथक्-पृथक् स्वरूप से वर्तमान होकर रहता और अनेक प्रकार के भोगों का भोगने वाला है। परमेश्वर को '**होता**' और जीवात्मा को 'अश्न' कहकर दोनों के वास्तविक भेद का दिग्दर्शन कराया गया है अर्थात् जीवात्मा अपने कर्मो का फल स्वतः प्राप्त नहीं कर सकता क्योंकि वह स्वरूप से एकदेशी और सीमित है। वह अपनी स्वाभाविक अल्पज्ञता के कारण कर्म करने में तो स्वतन्त्र है, परन्तु कर्म का फल भोगने में परतन्त्र है, परमेश्वर '**होता**' इसलिये है कि वह व्यापक और आनन्दस्वरूप होने के कारण सर्वतः परिपूर्ण और सर्वज्ञ है और इसीलिये फल प्रदान करने में सर्वथा समर्थ है।

'**भ्राता**' पद का अर्थ भाई नहीं है क्योंकि जिसका भाई होता है उसका पिता-माता भी कोई अवश्य होता है, परन्तु परमेश्वर तो '**पलित**' अर्थात् सम्पूर्ण जगत् का पालक-पोषक है, इसीलिये उसका कोई माता-पिता और भाई नहीं है। भ्राता का अर्थ है ग्रहणकर्त्ता। पाणिनीय व्याकरण के अनुसार '**ह्यग्रहोर्भश्छन्दसि**' वेद में ह और गृह् धातु के '**ह**' को '**भ**' आदेश हो जाता है। जैसे **हर्ता-भर्ता**, अहरत्-

अभरत् और **गृह्णामि-गृभ्णामि**, गर्भः भाव यह है कि जीवात्मा परमेश्वर के आनन्द और ज्ञान आदि गुणों का परमेश्वर से ग्रहण करने वाला होने से परमेश्वर का भ्राता है। यदि एकमात्र परमेश्वर ही परमेश्वर हो और उससे अतिरिक्त अन्य कोई चेतन तत्त्व न हो तो उसके आनन्द तथा ज्ञान आदि गुणों का लाभ कौन उठावे और कौन अनुभव करके वर्णन करे कि परमेश्वर आनन्दमय और सर्वज्ञ है? यह भ्राता जीवात्मा ही है जो परमेश्वर के गुणों का ग्रहण करता और अपनी त्रुटियों को पूर्ण करता है।

'अस्य तृतीयः भ्राता घृतपृष्ठः अस्ति' परमेश्वर और जीवात्मा से अतिरिक्त एक तीसरा अव्यक्त नामक तत्त्व और भी है जो क्षरण और संदीप्ति से भरपूर भोगों को धारण करने वाला है। यही वह तत्त्व है जिसके अन्दर अनेक प्रकार की भोग सामग्री विद्यमान है। इसी अव्यक्त तत्त्व को कोई प्रकृति और कोई माया आदि नामों से वर्णन करते हैं, सांख्य-शास्त्र में इसको 'प्रकृति' के नाम से स्मरण किया गया है और कहा गया है कि **'सत्त्व रजस्तमसां साम्यावस्था प्रकृतिः'** अर्थात् सत्त्व, रजस् तमस् इन तीनों गुणों की साम्यावस्था वाले तत्त्व का नाम **'प्रकृति'** है। कहा गया है कि इसी तत्त्व से पञ्च सूक्ष्म भूत शब्दस्पर्शादि तथा मन और अहंकार जैसे उपयोगी पदार्थों का आविर्भाव होता है। यह समझ लीजिये कि सकल ब्रह्माण्ड के सकल पदार्थों और अन्तःकरणों की जननी 'प्रकृति' माता है। महर्षि श्वेताश्वतर ने अपने वैदिक व्याख्यान में इसी तत्त्व को 'माया' के नाम से स्मरण किया है। उपनिषद् में कहा है कि-

मायां तु प्रकृतिं विद्यात् मायिनं तु महेश्वरम्।
तस्याः अवयवभूतैस्तु व्याप्तं सर्वमिदं जगत्।।

अर्थात् प्रकृति को ही 'माया' जानना चाहिये और 'माया' के स्वामी परमेश्वर को इसका अधिपति जानना चाहिये। इस प्रकृति-माया के अवयवों से यह सकल संसार भरा हुआ है।

यदि यह तीसरा तत्त्व अर्थात् भोग सामग्री से भरपूर 'प्रकृति' न होती तो यह सूर्य, पृथिवी, ग्रह, नक्षत्र आदि किससे उत्पन्न होते और जीवात्माओं को भोग भोगने के उपकरण अन्तःकरण कहाँ से प्राप्त होते? तब न शरीर होता, न मन आदि अन्तःकरण होता और न ही इष्ट-अनिष्ट स्वरूप सुख-दुःख की प्राप्ति ही होती।

अव्यक्त प्रकृति को परमेश्वर का भ्राता इसलिये कहा गया है कि यह तत्त्व भी जब तक परमेश्वर के कर्तृत्व और धारकत्व गुणों से लाभ नहीं उठाता तब तक न तो अपनी साम्यावस्था का ही त्याग कर सकता है और न ही अनेक प्रकार के भोगायतन शरीरों और भोगों के रूप में परिणित हो सकता है। ऐसा समझिये कि जैसे मृत्तिका को घटादि और कपास को वस्त्रादि रूप में परिणित होने के लिये कुम्हार और जुलाहे आदि निर्माणकर्त्ता कलाकार की आवश्यकता है वैसे ही अव्यक्त प्रकृति को जगत् रूप विकृति बनने के लिये सर्वज्ञ जगत्कर्ता परमेश्वर की आवश्यकता है।

दर्शनशास्त्र के सभी प्रकरण और सभी समस्यायें इन ही तीन तत्त्वों में से किसी न किसी तत्त्व से साक्षात् सम्बन्ध रखती हैं अथवा परम्परा से चलती-फिरती किसी न किसी तत्त्व के केन्द्र तक पहुँच जाती हैं। दर्शनशास्त्र का विषय इतना विशाल और व्यापक है कि संसार की सभी समस्याओं और उनके समाधानों का इसमें अन्तर्भाव हो जाता है। भारतीय दर्शन में इस विषय पर पुष्कल विचार किया गया है, हमारे षड्दर्शनों में दर्शनकार ऋषियों ने जितना भी ऊहापोह और तर्क-वितर्कपूर्वक विचार-विमर्श करके युक्तिप्रयोग किया है, उस सबका मूल प्रेरक 'वेद' ही है, हम यहाँ प्रकरणशः थोड़ा-सा दिग्दर्शन कराने का यत्न करते हैं।

ईश्वर सम्बन्धी विचार

ऋग्वेद के १० वें मण्डल का १२१ वाँ सूक्त परमेश्वर के विषय में बहुत आवश्यक प्रकाश डालता है। इसका नाम ही **'प्राजापत्य सूक्त'** है। इसमें उन सभी शंकाओं का समाधान किया गया है जो जिज्ञासुओं के हृदय में प्रायः उत्पन्न होती रहती हैं अथवा जिनकी सम्भावना हो सकती है। सभी मन्त्रों के अन्तिम चरण में एक वाक्य की आवृत्ति हुई है- **कस्मै देवाय हविषा विधेम** अर्थात् हम किस दिव्य शक्तिमान् की भक्तिभावना से पूजा करें। शेष तीन चरणों में युक्तिपूर्वक उत्तर दिया गया है कि सुखस्वरूप आनन्दघन परमेश्वर की भक्ति करें। याज्ञवल्क्य ऋषि ने

'कः वै प्रजापतिः' अर्थात् कस्मै का अर्थ प्रजापति परमेश्वर की पूजा करें–यह कहकर मन्त्रार्थ में चार चाँद लगा दिये हैं।

(१) पहिले मन्त्र में कहा गया है कि संसार की सभी प्रजाओं का कोई पति अवश्य होना चाहिये, वह जगत्पति हिरण्यगर्भ होना चाहिये, क्योंकि सूर्यादि ज्योतिष्मान् लोकों का कारक और उत्पादक यदि नहीं होगा तो इनकी उत्पत्ति नहीं हो सकती। नियम यह है कि उत्पादक कारण की सत्ता किसी भी उत्पन्न कार्य की उत्पत्ति से पूर्व ही होती है जैसे कुम्हार आदि कर्ता की सत्ता घटादि कार्य की उत्पत्ति से पूर्व होती है। पिता की सत्ता पुत्रोत्पत्ति से पूर्व ही होती है।

इस युक्ति को–**'हिरण्यगर्भः समवर्तत अग्रे'** के द्वारा स्पष्ट किया गया है। न्याय ग्रन्थों में कारण का लक्षण करते हुए इसीलिए **'नियतपूर्व वर्तित्वम्'** और वैशेषिक में **'कारणाभावात् कार्यभावः'** इत्यादि वचनों का प्रयोग किया गया है।

(२) **'भूतस्य जातः पतिः एक असीत्'** जगत् के उपादान कारण का वह अवश्यमेव अकेला ही अधिपति था। यदि प्रकृति पर परमेश्वर का एकाधिपत्य न माना जावे तो जगत् की उत्पत्ति नहीं हो सकती। क्योंकि जब तक उपादान कारण पर चेतन कर्त्ता का एकाधिपत्य न हो तब तक घटादि की उत्पत्ति नहीं होती। जगत् की स्थिति को देखकर निश्चय होता है कि इसकी उत्पत्ति से पूर्व इसके मूल कारण पर जगत्कर्ता चेतन परमात्मा का एकाधिपत्य अवश्य था।

(३) **'स दाधार पृथिवी द्याम् उत इमाम्'** उस परमेश्वर ने ही इस विशाल पृथिवी को और इस महान् द्युलोक के तारागण को धारण किया हुआ है। देखा यह जाता है कि हल्के से हल्का पदार्थ भी बिना किसी चेतन धारक के आकाश में स्थित नहीं रह सकता, परन्तु सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र, तारागण और इस पृथिवी जैसे अगणित भारी लोकसमूह चिरकाल से आकाश में स्थित होकर गति कर रहे हैं अतः इन भारी लोकपिंडों को आकाश में ठहराने वाला तथा गिरकर नष्ट हो जाने से बचाने वाला कोई महान् बलधारी परमेश्वर अवश्य है।

(४) दूसरे मन्त्र में कहा गया है कि **'य आत्मदा बलदा'** अर्थात् परमेश्वर वह है जो शरीरों में जीवात्माओं का प्रवेश कराकर प्राणियों को जीवनदान देता है और संसार के पदार्थों में अनेक प्रकार की शक्ति भर रहा है। जीवात्मा अल्पज्ञ होने से अपने शरीर की रचना करने में सर्वथा असमर्थ है और पदार्थ मात्र जड़ होने के कारण शक्ति संचार के विज्ञान से शून्य है अतः आत्मदा और बलदा कोई परमेश्वर अवश्य है।

(५) **'यस्य विश्व उपासते'** जिसकी सकल संसार उपासना करता है वह परमेश्वर है। संसार के किसी भी कोने में चले जाइये, किसी न किसी रूप में अलौकिक चेतन तत्त्व का विचार अवश्य पाया जाता है। यहाँ तक कि जंगली और हब्शी लोग भी किसी न किसी लोकोत्तर शक्ति पर विश्वास रखते हैं। यदि कोई परमेश्वर न होता तो संसार में इतना व्यापक और गम्भीर विश्वास न पाया जाता, परन्तु पाया जाता है अतः कोई विश्वासभाजन परमेश्वर अवश्य है।

(६) **'प्रशिषं यस्य देवाः'** दिव्य से दिव्य शक्ति वाले पदार्थ भी जिसके कठोर शासन में बंधे हुए हैं, वह परमेश्वर है। पृथिवी, सूर्य, चन्द्र आदि अपनी–अपनी परिधि में परिभ्रमण कर रहे हैं, एक क्षण के लिए भी अपने नियमों का उल्लंघन नहीं करते। नदी, समुद्र, पर्वत आदि भी कठोर शासन में बँधे हैं और अपने–अपने स्वभावों के विरुद्ध नहीं चलते। आंख, नाक, कान आदि इन्द्रियाँ भी अपने कार्यों से अतिरिक्त दूसरे इन्द्रिय के कार्य नहीं कर सकते। हृदय, उदर और मस्तिष्क आदि अंग भी नियमों में बँधे हुए हैं और मर्यादा का उल्लंघन नहीं करते। अतः कठोर शासन का शासक तथा अटूट नियमों का नियन्ता कोई परमेश्वर अवश्य है।

(७) **'यस्य छाया अमृतं यस्य मृत्युः'** जिसके नियम से अमृतम् अर्थात् जीवन और मृत्यु कार्य कर रहे हैं, वह परमेश्वर है। संसार में ऐसा कौन है जिसका जन्म न हुआ हो और ऐसा कौन है जिसकी मृत्यु न होती हो? अर्थात् कोई भी इस व्यवस्था से बचा हुआ नहीं है। ये जन्म और मृत्यु किसी भी प्राणी के वश में नहीं हैं। जिस नियन्ता के वश में यह जीवन–मृत्यु का चक्र चल रहा है,

वही परमेश्वर है।

(८) तीसरे मन्त्र में कहा गया है कि **'यः प्राणतो निमिषतो महित्वा एक इत् राजा जगतः बभूव'** अर्थात् परमेश्वर वह है जिसने अपने अनन्त सामर्थ्य से सकल संसार के प्राणधारियों और जड़ पदार्थों पर पूर्ण एकाधिपत्य स्थापित किया हुआ है।

प्राणधारियों में प्राणधारण प्रक्रिया प्राणधारियों की अपनी व्यवस्थानुसार नहीं है और जड़ पदार्थों में अनेक प्रकार की परिणमन प्रक्रिया भी जड़ पदार्थों की अपनी नहीं है, किन्तु इन दोनों पर किसी महिमामहान् परमेश्वर का साम्राज्य छाया हुआ है।

(९) **'य ईशे अस्य द्विपदः चतुष्पदः'** परमेश्वर वह है जो अपनी सर्वज्ञता से दो पैर वाले और चार पैर वाले प्राणियों पर शासन कर रहा है। जीवों को अनेक प्रकार की योनियों में परिभ्रमण करना पड़ता है, यह भ्रमण जीवात्मा के अल्पज्ञ, अल्पशक्ति होने के कारण उसके सामर्थ्य से बाहर है। अतः कोई सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् अवश्य है जिसकी व्यवस्था के आधीन जीवात्माओं को विवश होकर कभी मनुष्य और कभी पशु-पक्षी आदि योनियों में भ्रमण करना पड़ता है।

(१०) चौथे मन्त्र में कहा गया है कि **'यस्य इमे हिमवन्तः महित्वा समुद्रं यस्य रसया सह आहुः'** बड़े-बड़े विचारशील विद्वानों को स्वीकार करना पड़ता है कि महान् उच्च शिखर वाले पर्वतों से नदियों को प्रवाहित करना और उनको समुद्र में गिराना तथा पुनः समुद्र जल का भाप बनकर उड़ाना और मेघ द्वारा वर्षा कर्म सम्पादन करना तथा पर्वतों पर हिमपात करना-इतना महान् वैज्ञानिक कार्य है जिसे कोई अनन्त ज्ञान और अनन्त शक्ति वाला ही कर सकता है-मन्त्र कहता है वह परमेश्वर ही है।

(११) **'यस्य इमा प्रदिशः'** ये पूर्व-पश्चिम, उत्तर-दक्षिण और ऊपर-नीचे तथा अवान्तर दिशायें और इनमें स्थित पदार्थों के अस्तित्व को देखकर अनुभव होता है कि इस विभाग का निर्देश करने वाला यथार्थ विभाजक और निर्देशक अवश्य ही कोई सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान् परमेश्वर है।

(१२) **'यस्य बाहू'** गर्मी-सर्दी, सुख-दुःख, बन्ध-मोक्ष, धूप-छाया, भावाभाव, सिद्धि-असिद्धि आदि अनेक प्रकार के द्वन्द्वों से संसार भरा पड़ा है। इस महान् द्वन्द्व समूह को परस्पर सम्बद्ध करके सृष्टि में वैचित्र्य उत्पन्न करने वाला अनन्त ज्ञान और अनन्त सामर्थ्य वाला कोई परमेश्वर अवश्य है।

(१३) पाँचवें मन्त्र में कहा गया है-**'येन द्यौः उग्रा पृथिवी च दृढा'** अर्थात् जिसने परमाणुओं का पिण्डीकरण करके पृथिवी जैसे सुदृढ़ ठोस और भारी लोक बनाये तथा जिसने बिना चमक के निस्तेज परमाणुओं का पिण्डीकरण करके प्रकाशमान सूर्य आदि ज्योतिष्मान तारों से भरा द्युलोक बना दिया-वह परमेश्वर ही प्रजापति परमेश्वर है।

(१४) **'येन स्वः स्तभितम्'** जिसने संसार के प्रत्येक पदार्थ में सुख को सन्निविष्ट करके संसार को सुखधाम बना रखा है-वह आनन्दमय परमेश्वर ही है।

(१६) **'यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः'** जिसने विशाल अन्तरिक्ष में बड़े-बड़े लोक-लोकान्तरों को विशेष-विशेष परिमाण वाले बनाकर विशेष-विशेष दूरी पर स्थित किया हुआ है तथा उन विशेष-विशेष नियमों से गति दे रहा है, वह परमेश्वर ही है।

(१७) छठे मन्त्र में कहा गया है-**'यं क्रन्दसी अवसा तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने'** ये द्यावापृथ्वी जिसकी शक्ति से नियमबद्ध होकर भयभीत हुए कातर दृष्टि से उसे देख रहे हैं, वह परमेश्वर ही है।

(१८) **'यत्राधि सूर उदितो विभाति'** जिसका प्रबल प्रताप और महान् आश्रय प्राप्त करके सूर्य उदय होता है और विशेष प्रकाश से प्रकाशित होता है, वह परमेश्वर ही है।

(१९) सातवें मन्त्र में कहा गया है **'आपो ह यत् बृहतीः विश्वमायन् गर्भं दधानाः जनयन्तीः अग्निम्'** सर्वत्र फैली हुई परमाणु पुञ्ज प्रकृति ने आदि में जिसकी शक्ति को प्राप्त करके सृष्टि निर्माण के गर्भ को धारण किया और कालान्तर में अग्निस्वरूप ज्योतिष्मान् सूर्य जैसे महान् पिण्ड को उत्पन्न किया, वह परमेश्वर ही है।

(२०) **'ततो देवानां समवर्तत असुः एकः'** उसके पश्चात् उस एकमात्र परमेश्वर ने सभी दिव्य लोकों को संजीवनी शक्ति से भरपूर कर दिया। उस शक्ति के कारण ही आज तक ये लोक-लोकान्तर शक्ति सम्पन्न हो रहे हैं।

अगले दो मन्त्रों में भी इन्हीं युक्तियों का विशेष प्रकार से वर्णन किया गया है। वेद की प्रेरणाओं का निरन्तर मनन करने के अनन्तर ऋषि-मुनि जनों ने दर्शनशास्त्रों में अपने भावों को प्रभावशाली शब्दों में स्पष्ट किया है। यथा-

गौतम - ईश्वरः कारणं पुरुषकर्माफल्यदर्शनात्। ४.१.१९

कणाद - विभवान्महानाकाशस्तथा चात्मा। ७.१.२२

कपिल - ईदृशेश्वर सिद्धिः सिद्धा। ३.५७
स हि सर्ववित् सर्वकर्ता। ३.५६
समाधि सुषुप्ति मोक्षेषु ब्रह्मरूपता।

पतंजलि - क्लेशकर्मविपाकाशयैरपरामृष्टः पुरुषविशेष ईश्वरः। १.२४
तत्र निरतिशयं सर्वज्ञबीजम्। १.२५
स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्। १.२६

उदयनाचार्य- कार्यायोजनधृत्यादेः पदात् प्रत्यमतः श्रुतेः। वाक्यात् संख्याविशेमाच्च साध्यो विश्वविदव्ययः।

जैमिनी- हिरण्यगर्भः पूर्वस्य मन्त्रलिंगात्।

व्यास- जन्माद्यस्य यतः। १.१.२
शास्त्रयोनित्वात्। १.१.३
तत्तु समन्वयात्। १.१.४
आनन्दमयो ह्यभ्यासात्। १.१.१२
आकाशस्तल्लिंगात्। १.१.२२

'जीवात्मा सम्बन्धी विचार'

(१) जीवो मृतस्य चरति स्वधाभिः अमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः।
ऋ. १.१६४.३०

जीवात्मा अमर्त्य=अविनाशी=नित्य तत्त्व है। इसका शरीर से जब सम्बन्ध होता है तब जन्म और जब शरीर से वियोग होता है तब मृत्यु कहाता है। मृत्यु के समय जीव अपनी धारणाओं, शक्तियों और वासनाओं को अपने साथ लेकर दूसरे शरीर में प्रवेश करता है।

(२) अपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतः-
ऋ. १.१६४.३८

यह आत्मा अपनी शक्तियों को लेकर निकृष्ट योनियों में भी जाता है और उत्कृष्ट योनियों में भी जाता है।

(३) न विजानामि यदिवेदमस्मि - ऋ. १.१६४.३७

जीवात्मा अल्पज्ञ है और अनुभव करता है कि मैं अपने यथार्थ स्वरूप को ठीक-ठीक नहीं जानता हूँ।

(४) निण्यः सन्नद्धो मनसा चरामि- मैं शरीर के अन्दर छिपा हुआ हूँ और अनेक प्रकार के भयंकर बन्धनों से बँधा हुआ हूँ, तथापि अपने सब कार्य मन के द्वारा सम्पन्न करता हूँ।

बतलाया गया है कि जीवात्मा शरीर नहीं है किन्तु शरीर के बन्धन में सन्नद्ध एक बन्दी है। जीवात्मा के सभी कार्य मन के माध्यम से सम्पन्न होते हैं-वह मन से पृथक् है, परन्तु मन का संचालक है।

(५) तव शरीरं पतयिष्णु अर्वन्- हे जीवात्मन् तू तो अर्वा है अर्थात् अत्यन्त बलशाली घोड़े के समान रथ को गति देने वाला ज्ञान प्रयत्न वाला आत्मा है। तू शरीर नहीं किन्तु तू शरीर का स्वामी है। शरीर पतनशील, परिवर्तनशील है और मृत्यु का ग्रास होने वाला है, परन्तु तू अजर-अमर तत्त्व है जिसका कभी पतन वा विनाश नहीं होता।

(६) तव चित्तं वात इव ध्रजीयान्- तेरा चित्त वायु के समान महान् बलवान् है। तू चित्त भी नहीं है, किन्तु अपने चित्त को बलवान् बनानेवाला है। तेरी शक्ति से ही चित्त में अनेक शक्तियों का संचार हो रहा है।

(७) तव शृंगानि जर्भुराणाः चरन्ति- तू इन्द्रियाँ भी नहीं है, किन्तु इनसे पृथक् चेतन तत्त्व है। तेरी इन्द्रियाँ विषय भोगों की ओर भागी-भागी फिरती हैं। इन्द्रियों में विषयग्रहण की शक्ति तेरे कारण ही उत्पन्न होती है, तू तो इन्द्रियों का स्वामी है।

इत्यादि मन्त्रों से जहाँ जीवात्मा के अस्तित्व और उसके नित्य अविनाशी तत्त्व होने तथा अल्पज्ञ, बद्ध और शरीर-इन्द्रिय-मन से अतिरिक्त होने का वर्णन है वहाँ उसके स्वरूप और परिमाण का भी वर्णन किया गया है। कई स्थानों पर तो स्पष्ट शब्दों में जीव को अणु परिमाण वाला कहा गया है यथा- **बालादेकमणीयस्कम्** -ऋग्वेद। अर्थात् जीवात्मा एक ऐसा तत्त्व है जो कि बाल के अग्रभाग से भी सहस्रशः सूक्ष्म अणु परिमाण वाला है। ऋग्वेद में तो स्पष्ट शब्दों में आत्मा के स्थान तक का संकेत कर दिया गया है यथा- **बृहस्पतिः मे आत्मा नृमणा नाम हृद्यः** -ऋग्वेद। अर्थात् आत्मा बड़े से बड़े इन्द्रियों का भी पालक, शक्तिदायक

और कार्य में प्रवृत्त करने वाला है। वही स्फूर्तिमान् मनस् तत्त्व का संचालक है और उस आत्मा के निवास का स्थान हृदय है।

दर्शनों में भी गौतम आदि वैदिक मुनिजनों ने मन्त्रों पर विचार करके इस विषय पर सुन्दर प्रकाश डाला है यथा-

गौतम- दर्शनस्पर्शनाभ्यामेकार्थग्रहणात्। ३.१.१
पूर्वाभ्यस्तस्मृत्यनुबन्धाज्जातस्य हर्षभयशोकसम्प्रतिपत्तेः। ३.१.१९
इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानानि आत्मनो लिंगम्। १.१.१०
इन्द्रियान्तरविकारात्। ३.१.१२

कणाद- इन्द्रियार्थप्रसिद्धिरिन्द्रियार्थेभ्यो अर्थान्तरस्य हेतुः। ३.१.१
व्यवस्थातो नाना। ३.२.२०

कपिल- अस्त्यात्मा नास्तित्वसाधनाभावात्। ६.१
शरीरादिव्यतिरिक्तः पुमान्। १.१०४
संहतपरार्थत्वात्। १.१०५
षष्ठीव्यपदेशादपि। ६.३

पतंजलि- द्रष्टा दृशिमात्रः शुद्धोऽपि प्रत्ययानुपश्यः। २.२०
ततः प्रत्यक्चेतनाधिगमोऽप्यन्तरायाभावश्च। १.२९

व्यास- ज्ञोऽतएव। २.३.१८
नाणुरतत् श्रुतेरिति चेन्नेतराधिकारात्। २.३.२१
कामाच्च नानुमानापेक्षा। १.१.१८

प्रकृति सम्बन्धी विचार

जगत् के उपादान कारण प्रकृति के विषय में कहा गया है कि **'इयं विसृष्टिः यत आबभूव'** यह अनेक प्रकार की विचित्र सृष्टि जिस अपादान से प्रादुर्भूत हुई है।

संपतत्रैः द्यावाभूमी जनयन् देव एकः -एक महान् शक्तिशाली परमेश्वर ने इस द्युलोक और पृथिवी लोक को पतत्रों अर्थात् सूक्ष्म परमाणुओं के अनेकविध संयोग से उत्पन्न किया।

तम आसीत् तमसा गूढ़मग्रे- सृष्टि के आदि में तम अर्थात् महान् अन्धकार से आच्छन्न अव्यक्त प्रकृति तत्त्व विद्यमान था।

आभु अपिहितं यदासीत्- वह तो आभु अर्थात् सृष्टि का उपादान कारण पहिले वर्तमान था। **तपसा तन्महिना जायत एकम्**-परमेश्वर के अनन्त सामर्थ्य और अनन्त ज्ञान से परमाणुओं के संघीभूत होकर एक पिण्डकार हो गया।

इस प्रकार तीसरे प्रकृति रूप जड़तत्त्व का निरूपण करके वेद ने त्रैतवाद का सिद्धान्त उपस्थित किया और कहा है कि

त्रयः केशिनः क्रतुथा विचक्षते
सम्वत्सरे वपत एक एषाम्।
विश्वमेको अभिचष्टे शचीभिः
ध्रजिरेकस्य ददृशे नरूपम्।। ऋ.

अर्थात् संसार में तीन सत्तायें अपना-अपना पृथक् अस्तित्व रखती हैं और अपने-अपने कार्य में विशेष महत्त्व रखती हैं। संसार का मूल उपादान कारण **प्रकृति** नामक एक तत्त्व है जिससे संसार की उत्पत्ति होती है। दूसरा तत्त्व **जीवात्मा** नामक है जो इस जगत् को अपनी इन्द्रियों से अनुभव करके भोग भोगता है। तीसरा तत्त्व **परमेश्वर** नामक है जिसकी कलापूर्ण कृति और अनेकविध गति तो जगत् में सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है, परन्तु उसका रूप और आकार दृष्टिगोचर नहीं हो सकता।

द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्व जाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्ति अनश्नन्नन्यः अभिचाकशीति।।
ऋ.

प्रकृति रूप एक वृक्ष पर दो चेतन तत्त्व विराजमान हैं-वे दोनों एक दूसरे से अत्यन्त समीप हैं परस्पर मिले हुए हैं। ये जीव और ईश्वर हैं। इन दोनों में से एक अर्थात् जीवात्मा इस प्रकृति के संसार के फलों=भोगों को स्वाद लेकर भोग-आसक्त होता हुआ भोगता है और अनेक प्रकार के जन्म-मरण के चक्र पर भ्रमण करता है और दूसरा परमेश्वर है जो कुछ भी न भोगता हुआ जीव और जगत् के कार्यों पर दृष्टि मात्र रखता और सब प्रकार की व्यवस्था करता है।

द्वौ सुपर्णौ सयुजौ सखायौ- इस चतुर्विध विशेषण देने से मन्त्र का अभिप्राय सब प्रकार के अभेदवाद या अद्वैतवाद-शुद्धाद्वैतवाद, विशिष्टाद्वैतवाद, द्वैताद्वैतवाद और अद्वैतवाद आदि वादविवादों का प्रतिकार करके त्रैतवाद के महत्त्व को समझाने से है। वेद के इस त्रैतवाद का वर्णन जहाँ ऋग्वेद के प्रथम मंडल के समस्त १६४ वें सूक्त तथा १० मण्डल के १२९ वें सूक्त में है वहाँ श्वेताश्वतर आदि उपनिषदों और न्याय वेदान्तादि दर्शन ग्रन्थों में भी बड़े समारोह से व्याख्यान किया गया है।

- आर्योदय के वेदाङ्क से साभार

परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित आगामी कार्यक्रम

१. १२ से १९ मई, २०१९ – **आर्यवीर दल शिविर**

२. ०२ से ०९ जून, २०१९ – **आर्य वीराङ्गना शिविर**

३. १६ से २३ जून, २०१९– **योग-साधना शिविर**

४. १३ से २० अक्टूबर, २०१९– **योग-साधना शिविर**

५. ०१, ०२, ०३ नवम्बर २०१९– **ऋषि मेला**

ऋषि उद्यान में होने वाले कार्यक्रमों के लिए

सम्पर्क सूत्र- ०९४६०४२११८३, ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०

प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ है।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से व्याकरण, दर्शन तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की विशेष व्यवस्था है।

महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय रोहतक की शास्त्री, आचार्य परीक्षा की तैयारी भी इस पाठ्यक्रम के माध्यम से हो जाती है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास की निःशुल्क व्यवस्था है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य विद्यादेव

आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान

पुष्कर रोड, अजमेर।

९८७९५८७७५६

पठन-पाठन की विधि

पठन-पाठन आदि में लड़कों और लड़कियों को ऐसी शिक्षा देनी चाहिए कि वे स्थान और प्रयत्न के योग से वर्णों का ऐसा उच्चारण कर सकें कि जिससे सबको प्रिय लगे। जैसे (स) इसके उच्चारण में दो प्रकार का ज्ञान होना चाहिए एक स्थान और दूसरा प्रयत्न का। पकार का उच्चारण ओठों से होता है, परन्तु दो ओठों को ठीक-ठीक मिला ही के पकार बोला जाता है। इसका ओष्ठ स्थान और स्पष्ट प्रयत्न है और जो किसी अक्षर के स्थान में कोई स्वर वा व्यंजन मिला हो तो उसको भी उसी स्थान में प्रयत्न से उच्चारण करना उचित है।

(ऋ. भा. पठन.)

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ– प्रवचन, वेद–पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***– आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***– अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***– गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***– वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***– इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***– योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी–छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(०१ से १५ मार्च २०१९ तक)

१. श्री अमित व सुमन माहेश्वरी, ठाणे २. श्रीमती चन्द्रसुखी आर्य, कैथल ३. श्री लक्ष्मण मुनि, ऋषि उद्यान, अजमेर ४. श्री रणजीत सिंह, मुरादाबाद ५. ठेकेदार श्री तेजपाल सिंह, गाजियाबाद ६. श्री हरिओम सिंह, सम्बल ७. श्री वेदप्रकाश, हापुड़ ८. श्री सदानन्द आर्य, हरिद्वार ९. श्री दयालदास आहूजा, रायपुर १०. मै स्वस्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती ११. श्री प्रकाश चतुर्वेदी, मुंबई १२. श्री सुदेश कुमार, नई दिल्ली।

– परोपकारिणी सभा, अजमेर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(०१ से १५ मार्च २०१९ तक)

१. श्री किशनसिंह गहलोत, अजमेर २. आर्य चन्द्रप्रकाश झँवर, भीलवाड़ा ३. स्त्री आर्यसमाज, शिवाजीनगर गुरुग्राम ४. पार्क समिति, गुरुग्राम ५. श्री रमेश शेरा, गुरुग्राम ६. आर्यसमाज २१.२२.२३ सैक्टर, गुरुग्राम ७. श्री धर्मदेव नागपाल, गुरुग्राम ८. श्री संदीप गाबा, गुरुग्राम ९. श्री पंकज कालड़ा, गुरुग्राम १०. श्री रवीन्द्र कुमार हसीजा, गुरुग्राम ११. श्री सुरेन्द्र विज, दिल्ली १२. श्री धर्मवीर हसीजा, गुरुग्राम १३. श्री ईशान हसीजा, गुरुग्राम १४. श्री दक्ष हसीजा, गुरुग्राम १५. श्री अरुण कपूर, नई दिल्ली १६. स्टारैक्स विश्वविद्यालय, गुरुग्राम १७. श्री लक्ष्मण दास मदान, गुरुग्राम १८. श्री हंसराज मदान, गुरुग्राम १९. श्री सुरेश मदान, गुरुग्राम २०. मदान परिवार, गुरुग्राम २१. श्री जे. एन. भाटिया, गुरुग्राम २२. श्रीमती रानी कोरपाल, गुरुग्राम की स्मृति में २३. श्री गिरीश हर्षित, गुरुग्राम २४. श्री सुनील अदलखा, गुरुग्राम २५. श्री साहिल आहूजा, गुरुग्राम २६. श्री जतिन चावला, गुरुग्राम २७. श्री मनोज कुमार, गुरुग्राम, २८. श्री तीरथदास डोगरा, गुरुग्राम २९. श्री सुनील कुमार सेठी, गुरुग्राम ३०. श्री दिनेश चावला, गुरुग्राम ३१. श्री कमलेश चावला, गुरुग्राम ३२. श्री सुधांशु चावला, गुरुग्राम ३३. श्री अशोक गोगिया, गुरुग्राम ३४. श्री जगरूप सिंह, गुरुग्राम ३५. श्री सुनील सेठी, गुरुग्राम ३६. श्री संजीव कुमार चौधरी, गुरुग्राम ३७. श्रीमती वीणा चौधरी, गुरुग्राम ३८. सत्संग, गुरुग्राम ३९. श्री राजीव मनचन्दा, गुरुग्राम ४०. श्री अश्विनी सूद, गुरुग्राम ४१. श्री वरुण सूद, नई दिल्ली ४२. श्री कैलाशचन्द, गुरुग्राम ४३. श्री संदीप मोनिका यादव, गुरुग्राम ४४. श्री गोविन्द, गुरुग्राम ४५. श्री चन्द्रप्रकाश दुरेजा, गुरुग्राम ४६. श्री अशोक कुमार गुरुग्राम ४७. श्री देवेन्द्र आर्य, गुरुग्राम ४८. श्री प्रमोद आर्य, अजमेर ४९. श्री नरेन्द्र आर्य, गुरुग्राम ५०. श्रीमती ओमवती आर्य, करनाल ५१. श्रीमती प्रेमवती आर्य, हिसार ५२. श्री ललित आर्य, गुरुग्राम ५३. स्वामी ब्रह्मानन्द, हिसार ५४. कै. चन्द्रप्रकाश त्यागी व श्रीमती कमलेश त्यागी, रुड़की ५५. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बालाकैन्ट ५६. श्री हरसहाय सिंह आर्य, बरेली ५७. श्रीमती सुशीला देवी शर्मा, अजमेर।

– परोपकारिणी सभा, अजमेर।

जैसे पवन सब को सुख देता हुआ सब के रहने का स्थान हो रहा है वैसे ही विद्वान् को होना चाहिये।

–महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ५.४१

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आश्रम जमानी, इटारसी का वार्षिकोत्सव १,२ व ३ मार्च २०१९ को मनाया गया। दूर-दूर से पधारे आर्य विद्वानों तथा श्रद्धालुओं ने इस उत्सव की शोभा बढ़ायी। इस अवसर पर सामवेद पारायण महायज्ञ का आयोजन किया गया। इस यज्ञ के ब्रह्मा डॉ. अखिलेश शर्मा जी रहे तथा वेदपाठ श्री लक्ष्यवीर वेदालङ्कार, श्री सोमेश पाठक तथा श्री बलदेव 'राही' ने किया। यज्ञ के साथ-साथ विद्वान् अखिलेश जी के सारगर्भित उपदेश भी होते रहे। यज्ञ प्रातः व सायं दो सत्रों में सम्पन्न हुआ करता था। यज्ञ से पूर्व आर्यजगत् के प्रसिद्ध भजनोपदेशक श्री भूपेन्द्र सिंह जी तथा उनके साथी पं. लेखराज जी के मधुर भजन हुआ करते थे। यज्ञ के पश्चात् आर्य विद्वानों के व्याख्यान हुआ करते थे।

यह आश्रम ब्रह्मचारी नन्दकिशोर जी के द्वारा परोपकारिणी सभा को सौंपा गया है। स्वयं ब्रह्मचारी नन्दकिशोर जी भी तीनों दिन वहाँ उपस्थित रहे। इस अवसर पर सभा की ओर से सभा के प्रधान डॉ. वेदपाल जी, वरिष्ठ उपप्रधान श्री ओम्मुनि जी, पुस्तकाध्यक्ष श्रीमती ज्योत्स्ना 'धर्मवीर' जी आदि अजमेर से चलकर वहाँ पहुँचे तथा तीनों दिन की व्यवस्थाओं का संचालन किया।

यह आश्रम जंगल के बीचोंबीच कई एकड़ भूमि में फैला हुआ है। यहाँ का वातावरण सुरम्य है, परन्तु कई वर्षों से बारिश न होने के कारण यहाँ पानी की कुछ कमी हो गयी है अतः अजमेर से पधारे अधिकारियों ने यह विचार किया कि यहाँ एक तालाब का निर्माण होना चाहिये। न सिर्फ विचार किया बल्कि इसी अवसर पर तालाब की खुदाई की शुरुआत सभा के प्रधान डॉ. वेदपाल जी ने अपने हाथों से की। श्री ओम्मुनि जी ने तालाब के निर्माण की घोषणा की तथा जनता को सम्बोधित किया।

इसी अवसर पर ब्रह्मचारी नन्दकिशोर जी द्वारा लिखित 'आर्यसमाज एवं विश्व की नारी जाति' पुस्तक का विमोचन किया गया। जिसको आधार बनाकर डॉ. वेदपाल जी का विद्वत्तापूर्ण उद्बोधन हुआ।

अन्य विद्वद्गण भी समय-समय पर पधारते रहे। स्वामी ऋतस्पति जी, होशंगाबाद, स्वामी अमृतानन्द जी (जमानी), आचार्य कर्मवीर जी (रोजड़) आदि महानुभाव भी पधारे। सभी श्रद्धालुओं के भोजन की व्यवस्था आश्रम द्वारा ही की गयी थी। आश्रम में ही निवास कर रहे ऋषि उद्यान के स्नातक श्री सत्यप्रिय जी, श्री निरंजन जी तथा श्री अक्षय जी आदि ने व्यवस्था को संभाले रखने में समुचित सहयोग प्रदान किया।

दूर-दूर स्थानों से अनेक विशिष्ट महानुभाव भी पधारे। जिनमें श्री हेमन्त दुबे (जमानी), श्री कृष्ण कुमार मालवीय (इटारसी), श्री ओम रघुवंशी (पूर्वविधायक, सिवनी मालवा), श्री वेदप्रकाश शर्मा (पूर्व आई.जी. म.प्र. सरकार), डोलरिया से श्री नरेन्द्र जी, श्री सुखराम जी (सरपंच, जमानी) आदि प्रमुख थे। अनेक आर्यसमाजों से भी आर्यजन पधारे। जिनमें सारणी आर्यसमाज (छिन्दवाड़ा), साजनगर आर्यसमाज (नागपुर), डोलरिया आर्यसमाज, इटारसी आर्यसमाज, बैगलू आर्यसमाज (महाराष्ट्र) तथा जबलपुर आर्यसमाज प्रमुख थीं।

इस प्रकार यह त्रिदिवसीय कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

आर्यजगत् के समाचार

१. आवश्यकता- आर्यसमाज मोहल्ला गोबिन्दगढ़, जालन्धर, पंजाब के लिए एक सुयोग्य पुरोहित की आवश्यकता है। पुरोहित आर्यसमाज के सिद्धान्तों के अनुसार सभी वैदिक संस्कारों को कराने की योग्यता रखता हो। मासिक दक्षिणा योग्यतानुसार दी जायेगी। आवास की नि:शुल्क व्यवस्था आर्यसमाज की ओर से की जाएगी। यदि विवाहित हो तो अच्छा रहेगा।

सम्पर्क- ९८७८७९८८३४, ९८८८१४३३९९

२. वार्षिकोत्सव- आर्यसमाज राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली के ६७वें वार्षिकोत्सव के उपलक्ष्य में नौ दिवसीय विशेष कार्यक्रम का आयोजन दि. ३० मार्च से ७ अप्रैल २०१९ तक किया जा रहा है। इस अवसर पर बाल सम्मेलन, महिला सम्मेलन एवं सामदेवीय बृहद् यज्ञ तथा वेद कथा का आयोजन किया जा रहा है। आप सभी सादर आमन्त्रित हैं। **सम्पर्क- ०११-२५७६०००६**

३. प्रवेश परीक्षा- आर्यसमाज मन्दिर, नवाबगंज, हजारी बाग, झारखण्ड द्वारा २०११ से संचालित आर्ष कन्या गुरुकुल में प्रवेश के इच्छुक कन्याओं के लिए प्रवेश-परीक्षा दो तिथियों में आयोजित की गई है। पहली प्रवेश-परीक्षा २६ मई एवं एवं दूसरी प्रवेश-परीक्षा १६ जून को आयोजित की गई है। लिखित परीक्षा के साथ मौखिक परीक्षा भी उसी दिन ले ली जाएगी।

विशेष- प्रवेशार्थी की आयु ९ से १२ वर्ष, फार्म जमा करने की अन्तिम तिथि १५ मई २०१९ तक। प्रवेश-परीक्षा में उत्तीर्ण कन्या ही प्रवेश ले सकती है। आर्ष पाठ-विधि के साथ-साथ आधुनिक शिक्षा का समुचित प्रबन्ध। फार्म एवं नियमावली प्राप्त करने एवं भरने के लिए प्रयोग करें- kanyagurukulhazaribagh@gmail.com

सम्पर्क सूत्र- ९४३०३०९५२५, ९३०८८८७०५

४. जन्मोत्सव का आयोजन- स्वामी सर्वानन्द महाराज के ११९वें जन्मोत्सव पर वेद विज्ञान सम्मेलन का आयोजन दयानन्द मठ, दीनानगर, जि. गुरदासपुर, पंजाब द्वारा दि. ११ से १३ अप्रैल २०१९ को आयोजित किया जा रहा है। आप सभी सादर आमन्त्रित हैं। सम्पर्क- ०१८७५-२२०११०, ०८५५८८३१०००

५. बोधोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज होडल, जनपद पलवल, हरियाणा में महर्षि दयानन्द बोधोत्सव (शिवरात्रि) महापर्व धूमधाम से मनाया गया। इस अवसर देवयज्ञ आचार्य नेतराम शास्त्री-प्रधान आर्यसमाज होडल ने सम्पन्न कराया। यज्ञ में सैकड़ों नर-नारियों, युवकों व बच्चों ने आहुतियाँ दी।

६. ऋषि बोधोत्सव मनाया- युगप्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती के बोधोत्सव पर आर्य केन्द्रीय सभा, सोनीपत के तत्त्वावधान में कार्यक्रम आयोजित किया गया।

७. यज्ञ का आयोजन- सार्वभौम भारतीय वैदिक सन्थ मण्डली, ओडिशा द्वारा दि. २३ व २४ फरवरी २०१९ को ऋग्वेदीय विश्व शान्ति महायज्ञ हजारों नर-नारियों की उपस्थिति में धूमधाम से आयोजित किया गया। इस अवसर पर अन्नप्राशन संस्कार, एक अनाथ बेटी का विवाह संस्कार एवं आर्य संगठन बनाया गया।

चुनाव समाचार

८. सार्वभौम भारतीय वैदिक सन्थ मण्डली, ओडिशा के चुनाव में **प्रधान**- श्री सत्यानन्द-गोपालपुर, **मन्त्री**- श्री राजेन्द्र डनसना-भटनी, **कोषाध्यक्ष**- श्री हिरण्य नायक-गोपालपुर को चुना गया।

वैवाहिक विज्ञापन

९. वधु चाहिये- आर्य परिवार, जन्मतिथि १२-०१-१९९२, लम्बाई ५ फुट ५ इंच, शिक्षा बी.टेक, अन्तर्राष्ट्रीय कम्पनी में कार्यरत, युवक हेतु आर्य परिवार की सुशिक्षित एवं संस्कारित युवती चाहिये। **सम्पर्क**- ९४१२८६५७७५, ९४१२१३५०६०

१०. वधु चाहिये- आर्य परिवार, आयु २५ वर्ष, योग्यता आर्किटेक्ट युवक हेतु आर्य परिवार की सुशिक्षित एवं संस्कारित युवती चाहिये। **सम्पर्क सूत्र**- ९४१४००३४६८

शोक समाचार

११. गाँधी नगर दिल्ली के वरिष्ठ आर्यसमाजी कार्यकर्त्ता एवं श्री जितेन्द्र भाटिया (कोषाध्यक्ष आर्यवीर दल, दिल्ली) के पिता **श्री सत्यपाल भाटिया** का १४

फरवरी २०१९ को निधन हो गया। परोपकारी परिवार की ओर से दिवंगत आत्मा को शान्ति के लिये प्रभु से प्रार्थना एवं हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

१२. परोपकारिणी सभा की अनन्य सहयोगी **श्रीमती सुशीला देवी शर्मा** का देहावसान दिनांक २१/०३/२०१९ को अजमेर स्थित नगरा में हो गया। आपका अन्तिम संस्कार पूर्ण वैदिक रीति से मलूसर श्मशान में किया गया। आप महर्षि दयानन्द सरस्वती की भक्त थी तथा समर्पित आर्य महिला थीं। निरन्तर कई वर्षों तक भिनाय कोठी स्थित महर्षि दयानन्द निर्माण न्यास की सदस्य भी रहीं तथा नियमित रूप से ऋषि उद्यान के सत्संग में उपस्थित रहती थीं।

ईश्वर उनके परिवार को इस दु:खद घटना को सहन करने की शान्ति प्रदान करे। परोपकारी पत्रिका परिवार पुण्यात्मा को श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता है।

१३. परोपकारिणी सभा के सहयोगी श्री श्रद्धानन्द जी की धर्मपत्नी **श्रीमती रमा जी** आकस्मिक निधन दिनांक ०२-०२-२०१९ को हो गया। श्रीमती रमा जी धार्मिक प्रवृत्ति की विदुषी महिला थीं। आपके निधन का समाचार सुनकर संस्था को बहुत दु:ख हुआ। प्रभु से प्रार्थना है कि उनकी पुण्य आत्मा को सद्गति प्राप्त हो। परिवार को इस दु:खद स्थिति को सहन करने की परमात्मा शक्ति प्रदान करें।

सभा की ओर से दिवंगतात्मा को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

पाठकों की प्रतिक्रिया

आदरणीय महोदय, सादर नमस्ते!

आप द्वारा प्रेषित वर्ष भर की २३ नग परोपकारी पाक्षिक पत्रिका प्राप्त हुई हैं। आप द्वारा मेरे पत्र के प्रति उत्तर में यह अंक प्रेषित किये हैं आपका बहुत-बहुत धन्यवाद है। यह आपकी तत्परता और कार्यकुशलता प्रदर्शित करता है। मुझे नियमित पत्रिका नहीं मिली थी यह डाक विभाग की लापरवाही हो सकती है। आप द्वारा इतनी सजगता दिखाना बताता है कि पत्रिकाएँ नहीं मिली इसके लिये आपके स्तर से कोई कमी नहीं रही। आपका पुन: धन्यवाद करता हूँ। इसके लिये आप प्रशंसा के पात्र हैं।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं। चिकित्सालय का समय प्रात: ९ से ११ बजे तक है। रविवार का अवकाश होता है।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

उन्नति का कारण सत्योपदेश

जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है। (स. प्र. ३)